मुआवजा

मुआवजा

महेश कुमार केशरी 'राज'

परिकल्पना

© लेखक

संस्करण : 2019
ISBN : 978-93-87859---?

शिवानंद तिवारी द्वारा *परिकल्पना,* बी-7, सरस्वती कामप्लेक्स, सुभाष चौक, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092 से प्रकाशित और शेष प्रकाश शुक्ला, गाजियाबाद-201010 से टाइप सेट होकर काम्पैक्ट प्रिंटर्स, दिल्ली-110032 में मुद्रित

समर्पण

अनुक्रम

आखिरी फैसला	9
सुरेश बाबू	18
किस्सा कोयलांचल का	27
अंधविश्वास	35
सोशल नेटवर्किंग साइट	45
मुआवज़ा	54
घटना एक गांव की	61
कैद	68
जाल	74
कफन	83
गिरफ्त	89
नामकरण संस्कार	95

आखिरी फैसला

चंदू बाबू अपने घर से अचानक गायब हो गए थे। नहीं चंदू बाबू कोई बच्चे नहीं थे। चंदू बाबू पूरे पैंसठ बसंत देख चुके थे। चंदू बाबू ने सोचा था। उनके गायब हो जाने से घर के लोग चिंतित होंगे। उनको लेकर परेशान होंगे खाना-पीना सब छोड़ देंगे, लेकिन ठीक इसके उलट ही हुआ था। किसी ने चंदू बाबू की कोई खोज खबर नहीं ली थी। वो घर में पड़े किसी अनावश्यक सामान की तरह खुद ही हट गए थे। चंदू बाबू भी अब उपयोगी नहीं रह गए थे। वो बिजली विभाग के क्लर्क पद से रिटायर जो हो जाए थे। चंदू बाबू की अब उपयोगिता नहीं बची है। इसलिए वो घर छोड़कर कहीं चले गए थे। कुछ दिन कलावती देवी चंदू बाबू की पत्नी ने चंदू बाबू को खोजने की कोशिश भी की थी, लेकिन कुछ दिनों के बाद वो भी शांत पड़ गई थी। और फिर पूरा परिवार अपने आप में फंसे व्यस्त सा हो गया था।

चंदू बाबू व्यवहार कुशल व्यक्ति थे। उनकी दोस्ती सबसे थी वो किसी के दुश्मन हो ही नहीं सकते थे। बिजली विभाग में भी जब काम करते थे तब भी सबसे प्रेम पूर्वक व्यवहार करते थे। चाहे छोटा हो या बड़ा। चंदू बाबू सबका सम्मान करते थे। हम रिश्तों को कभी-कभी जरूरत या मजबूरी से निभाते हैं। कभी-कभी किसी लालच से भी निभाते हें, लेकिन चंदू बाबू ऐसे नहीं थे। उन्हें किसी चीज का लालच नहीं था। वो अपने संबंधों में प्रेम ढूंढ़ते

थे। रिश्तों में कभी लालच या फायदा नहीं लाते थे। वो ऐसे आदमी थे कि किसी अनजान से ीीि निटों में दोस्ती गांठ लें। लेकिन किसी फायदे के लिए नहीं अगर सामने वाले को उनसे लाभ हो तो हो। लेकिन उनको सामने वाले से कोई लोभ या कोई लालच नहीं था। ऐसे आदमी थे। चंदू बाबू। बस उहें आपसे प्रेम और स्नेह चाहिए। उनके पास लालच टिक ही न पाता था। एक नंबर के स्वाभिमानी आदमी भी थे चूंदू बाबू। आप विश्वास नहीं करेंगे। बिजली विभाग ूमें बतौर कलर्क काम करते थे। लेकिन आज तक उनके दामन पर एक भी दाग नहीं लगा था। वो ऊपर की कमाई को हराम समझते थे। अलबत्ता उन्हें किसी की मदद् करना अच्छा लगता था। अपने कलीग और मित्रों की हमेशा हाल-चाल पूछते थे। उनके कितने ऐसे दोस्ते थे। जिन्हें हम जानते तक न थे। कभी-कभी हमें आश्चर्य होता था कि पानवाला शंभू चायवाला तिवारी जी, राशन वाले झाजी, कपड़े वाले मिश्रा जी की समस्याओं को वो कैसे जानते हैं। जिनसे भी मिलते उनसे घंटों बतियाते, अपने सब काम धाम को छोड़कर। सबके दुखड़े सुनते। अपनी राम-कहानी लोगों को सुनाते। जिससे भी मिलते उसके ही होकर रह जाते। कुल मिलाकर ऐसा व्यक्ति तो शयद ही इस कलयुग में आपलोगों को मिले। लेकिन जब यही चंदू बाबू अपने रिटायरमेंट के बाद अपने घर पहुंचे थे तो उनहें अपना ही घर बेगाना सा लगा था। एक पल को उन्हें लगा था की वो किसी और के घर में तो नहीं आ गए हैं। लकिन जब अपनी पत्नी कलावती को ेदखते। अपने बच्चों को देखते तब जाकर कहीं उनक भ्रम दूर होता। चंदू बाबू के चार लड़के थे। बड़े बेटे योगेश ने एक कोचिंग इंस्टीट्यूट खोल रखा था। करीब दस बारह घंटे कोचिंग में पढ़ाता था। आमदनी उसकी अच्छी खासी थी। मंझला लड़का प्रकाश ने एक कुरियर कंपनी का काम ले रखा था। और दिन भर वो अपने दुकान पर काम करता रहता। देर रात गए कहीं घर लौटता तीसरा लड़का रूपेश था। उसने पुरानी गाड़ियों जूगनू था। जिसने अपना एक प्रेस खोल रा था। सब बाल बच्चे वाले लोग दें।

खैर चंदू बाबू अपने घर से भागकर अपने बिजली विभाग के दफ्तर के नीचे वाले मिश्राजी की दुकान पर काम करना शुरू कर दिया था। मिश्राजी का चंदू बाबू से बड़ा ही आत्मीय संबंध था। मिश्राजी अपने भाई की तरह मानते थे चंदू बाबू को। वहीं चंदू बाबू ने मिश्राजी का खाता बही और रोकड

को काम संभाल लिया था। चंदू बाबू रिटायरमेंट के बाद जब एक दिन घर पर ही थे। तब वे पत्नी से बोले "कलावती मेरा बहुत मन करता है की तुम मेरे पास बैठो। मुझसे पहले की तरह बातें करो। आखिर ऐसा क्या हो गया है की तुम अब मेरे पास पहले की तरह नहीं बैठती।"

इस पर कलावती देवी चंदू बाबू को झिड़कती हुई बोली "बुढ़ापे में तुम सठिया गए हो क्या योगेश के बाबूजी। इस उम्र में यदि में तुम्हारे पास बैठने लगी तो बेटे-बहू क्या सोचेंगे।" तुम अपने ऊपर नहीं तो कम से कम मेरे ऊपर तो तरस खाओ। उस दिन ये बात आयी गई हो गई। एक दिन जब चंदू बाबू अपने कमरे में बैठकर कोई अखबार पढ़ रहे थे। तब कलावती देवी चंदू बाबू से बोलीं "घर के खर्चे बहुत बढ़ गए हैं। योगेश कह रहा था वो अब इस घर के खर्चे अकेले नहीं चला सकता। बाबूजी को बोलो की वो कोई काम-धाम करें। मुझे भी योगेश की कही बात ठीक ही लगती है। तुम कयां नहीं कोई काम-धाम ढूंढते!" अपनी पत्नी कलावती देवी के मुंह से ऐसी बात सुनकर चंदू बाबू को आघात सा लगा। वो कलावती देवी से बोले योगेश घर चलता है। इससे पहले जब तक मैं सर्विस में था तब तक एक पैसे भी तंगी मैंने तुम लोगों को नहीं होने दी। अभी चार महीने मेरी सेवानिवृत्ति के नहीं हुए और तुम लोगों ने ैसों को लेकर रोना, रोना शुरू कर दिया। उन्होंने योगेश को आवाज दी।' जब योगेश सामने आया तो वो योगेश से बोले "बोलो तुम अपनी अम्मा से क्या कह रहे थे। क्या तुमसे अब ये घर नहीं चल रहा है। यही घर है जिसे मैंने चालीस साल तक बिना किसी से कुछ लिए दिए ही चलाया था।" तब योगेश बाबूजी के बात को लगभग बीच में ही काटते हुए बोला "बाबूजी तब की बात अलग थी। उस समय इतनी मंहगाई नहीं थी। इसलिए घर असानी से चल रजाता था। आज इतनी ज्यादा मंहगाई है की आप भी ये घर नहींच ला सकते। मेरी तो बात ही छोड़िए।"

चंदू बाबू ने अपने परिवार और बाल-बच्चों के लिए बहुत कुछ किया था। अपनी चालीस साल की नौकरी में उन्होंने कभी सांस लेकर भी नहीं सुस्ताया। वे लगातार काम करते चले आ रहे थे। इधर छोटे-मोटे खर्चे को लेकर भी उन्हें अब लड़कों पर निर्भर रहना पड़ रहा था। इधर कई दिनों से उनका जूता टूट गया था। इसको लेकर वो परेशान थे। एक दिन वो अपने मंझले लड़के प्रकाश से बोले "प्रकाश मेरा जूता टूट गया है। सुबह-शाम में

टहलने जाता हूं, तो चलने में बड़ा कस्ट होता है। तुम जब बाजार से लौटना तो एक जोड़ी सात नंबर का जूता मेरे लिए लेते आना।"

लेकिन मंझले लड़के प्रकाश के कानों पर जूं तक नरेंगी। वो पहले की तरह अपने काम पर जाता और अब वो रात को जानबूझकर दे देर से आता। रि वो चंदू बाबू से बचकर सुबह-सुबह जल्दी ही काम पर चला जाता। दरअसल प्रकाश ऐसे समय में घर घुसता जब चंदू बाबू सो रहे होते या टी. वी. देख रहे होते। और सुबह जल्दी घर से निकल जाता। उनके देखने से ठीक पहले। प्रकाश चाहता था की उसका चंदू बाबू से कम से कम सामना हो। वो चंदू बाबू से बचता रहता था। एक दिन चंदू बाबू कलावती देवी से बोले "आजकल प्रकाश दिखाई नहीं देता है। कहां रहता है आजकल?मैंने उसे अपने लिए एक जोड़ी जूते लाने को कहा था। लेकिन वो तो दिखना ही बंद हो गया है।" कलावती देवी प्रत्युतर में बोलीं "प्रकाश को इस महीने बहुत काम है। उसे अपने दोनों बच्चों पिंटू और बबलू की स्कूल फीस भी भरनी है। इधर उसको बहू नीता भी पेट से है। उसको भी डॉक्टर को दिखलाना है। मुझे लगता है की अब बच्चा होने ही वाला है। दिन भी तो पूरे हो ही गए हैं। "यह कहती हुई वो दूध लाने क लिए चली गईं।

इधर दो साल के बाद उम्र बढ़ने के कारण अब चंदू बाबू को थोड़ा-बहुत कम दिखाई पड़ने लगा था। चंदू बाबू को अब अखबार या किताबें पढ़ने में बहुत दिक्कत होती थी। बहुत निों से वो सोच रहे थे की एक चश्मा का जुगाड़ हो जाता तो वो आराम से अखबार पढ़ पाते। इसी बात को वो कई दिनों से सोचते आ रहे थे। एक दिन उन्होंने अपने संझले बेटे रूपेश को टोका" बेटा रूपेश, मैं सोच रहा था, की मुझे अब आंखों से थोड़ा-बहुत कम दिखाई देने लगा है। आखबार पढ़ने बहुत दिक्कत होती है। अरग आंख वाले डॉक्टर को मैं अपनी आंखें दिखा लेता तो बढ़िया रहता। किसी दिन तुम मुझे आंख वाले डॉक्टर को दिखला दो।

लेकिन रूपेश चंदू बाबू की बात को बीच में ही काटते हुए बोला "बाबूजी फिलहाल मेरे पास एक भी रूपया नहीं है। इधर गाड़ियों की खरीद-बिक्री का धंधा भी बहुत गंदा चल रहा है। नही तो में आपको डॉक्टर के पास जरूर ले जाता। "हां इस महीने तो नहीं लेकिनअगले महीने में आपको जरूर आंखों के डॉक्टर के पास ले चलूंगा।" रूपेश चंदू बाबू को आश्वासन देते हुए

बोला। इतना कहकर तो अपनी मोटर साइकिल स्टार्ट करता हुआ। कहीं बाहर चला गया।

चंदू बाबू ने सोचा की चलो इस महीने ना सही। अगले महीने आंखों को डॉक्टर से दिखला लिया जाएगा, लेकिन वो अगला महीनो कभी नहीं आया। और रूपेश भी बाबूजी को टालता रहा। इस घटना को सालभर से ज्यादा हो गए।

"चंदू बाबू...अरे चंदू बाबू सुनते हैं। चायपी लीजिए। कबसे लाकर रखी हुई है। ठंडी हो जाएगी।" गणेश जो मिश्रा जी के यहां पर काम करता था। उसने चंदू बाबू को जैसे सोते से जगाया।

"औ...हां...अच्दा क्या चाय...अच्छा-अच्छा पीता हूं।" चंदू बाबू झेंपते हुए से बोले। नहीं फेरे उनकी आंखों में नींद कहां आयी थी। अब वो रात को भी बहुत कम ही सो पाते थे। अलस्सुबह सैर के लिए निकल पड़ते थे। इधर उन्होंने अपनी घड़ी बेच दी थी। और अपेन लिए एक जोड़ी जूता और एक चश्मा भी खरीद लाए थे।

वो याद करते हैं ये जो योगेश मेरा बड़ा लड़का है। ये पहले कितना विनम्र और शांत स्वभाव का था। एक बार चंदू बाबू ने किसी गलती पर योगेश को पीट दिया था। लेकिन योगेश ने चूं-चीं कुछ भी भी नहीं किया था। आज यही योगेश उनका सम्मान नहीं करता। खैर वक्त-वक्त की बात है। ये जो दूसरा लड़का प्रकाश है। जो आज मेरी बात नहीं सुनता। ये जब स्कूल में पढ़ता था तो मेंने अपने व्यक्तिगत खर्चो पर रोक लगाने हुए महीने की पहली ताीख को ही पसा मिलते ही इसके लिए दो जोड़ी जूते एक काला और एक सफेद हर साल खरीदकर लाता था। लेकिन प्रकाश को ये बातें कहां याद हैं। ये जो तीसरा लड़का रूपेश है। इसकी पैदाइश के समय चंदू बाबू ने बड़ी हंगामेदार पार्ट की थी। लोगों को भी आज भी याद है वो शानदार पार्टी। लेकिन कहां याद है इन लोगों को उनकी की गई वो बातें। सब के सब एहसान फरामोश है। मैंने अपनी पूरी जिंदगी इन लोगों के लिए लगा दी। लेकिन ये लोग न हो सके। उन्हें एक बारगी लगा की वो एक असफल गृहस्थ हैं। जिनकी चालीस सालों की तपस्या का कोई फल न मिला हो। कलावती मेरी पत्नी है लेकिन हमेशा अपने बच्चों की तरफदारी करती रही है। एक नंबर की चापलूस है। भूलकर भी या गलती से भी मेरी बातें

का समर्थ नहीं करती है। आज से पहले तक तो लोग मेरे बारे में यही कहते थे। यार चंदू बाबू बड़े नसीब वाले हैं। भगवान ने इनको चार-चार बेटे दिए हैं। इनका बुढ़ापा बड़े आराम से कटेगा। लकिन लोगों की कही सारी बातें ठीकं ही तो नहीं होती ना।

चंदू बाबू ने घड़ी पर नजर डाली। तीन बज गए हैं। लेकिन कलावती ने अभी तक मुझे खाना खाने क लिए नहीं बुलाया। कलावती भी कितनी लापरवाही हो गई है। जब में नौकरी में था। और कभी-कभार तीज-त्योहार में घर आता था। तब यही कलावती मेरे आगे-पीछे डोलती रहती थी। क्योंकि तब मैं पेसे कमाता था। सरकारी बाबू था। पचास हजार रुपए महीने। आज मैं सेवानिवृत्त हो गया हूं। आज मैं पैसे नहीं कामता। क्या इसीलिए? यही कलावती थी, जब आज से चार साल पहले रामनवमी की छुट्टी पर जब मैं घर आया था। वो मेरे लिए दही बड़े प्याज की पकौड़ी, घुघनी और मेरी पसंद की वो तमाम चीजें मुझे बनाकर खिलाया करती थी। बच्चे मेरे आगे-पीछे डोलते रहते थे। यही योगेश था। जब उसे लैपटॉप खरीदना था। तो मुझे रोज फोन कर-करके याद दिलाता रहता था। बाबू जी आप जब आइयेगा तो मेरे लिये एक लैपटॉप लेते आइयेगा।'' मुझे पढ़ने में दिक्कत होती है। और चंद्र बाबू ने सचमुच ही बोनस मिलने पर योगेश के लिये एक लैपटॉप खरीद दिया था। लेकिन आज योगेश। मुझसे सीधे मुंह बात भी नहीं करता। चंद्र बाबू को लगा की उनको भूख कुछ ज्यादा ही लग गयी है। उन्होंने कलावती देवी को बैठक से ही आवाज लगायी ''अरे कलवाती...सुनती हो!'' कलावती देवी टी.वी पर कोई प्रोग्राम देख रही थी। प्रोग्राम को आधे में छोड़ना पड़ा। वो झुंझलाती हुई आयी और झुंझलाकर चंद्र बाबू से बोली ''..... ये अब क्या हुआ?'' चंद्र बाबू ने घड़ी की तरफ इशारा करते हुए कहा देख रही हो समय क्या हो गया है। सवा तीन बज बये हैं। खाना कब मिलेगा।''

कलावती देवी को जैसे कोई भूली हुई बात याद आ गई। वो लगभग झेंपते हुए बोलीं ''चलिये चलकर खाना खा लीजिए!'' चंद्र बाबू और कलावती देवी जब खाना खाने के लिये अन्दर तो वो अन्दर का माहौल देखकर भौंचक रह गये। बड़ा लड़का योगेश बोल रहा था ''अब मुझसे इस घर का खर्चा नहीं चलता है। घर में चारों लोग कमा रहे हैं। लेकिन घर के

खर्चे में कोई योगदान नहीं दे रहा है। मैं अब ये घर नहीं चला सकता।'' मंझला भाई प्रकाश योगेश की हां में हां मिलाते हुए बोला ''हां योगेश भईया आप ठीक बोल रहे हैं। इतनी मंहगाई में एक साथ, रहना संभव नहीं है। हम अपने बाल-बच्चे पालें यो औरों के बाल-बच्चे को बालें।'' तीसरा भाई उपेश भी कहां चुप रहने वालों में से था। वो भी में बीच में कूद गया।'' कौन किसके बाल-बच्चों को पालता है। यहां सभी लोग कमा रहे हैं। और अपने-अपने बाल-बच्चों को पाल रहे हैं। किसी ने किसी का ठेका नहीं ले रखा है। और किसी को किसी पर एहसान करने की भी जरूरत नहीं है। जिसको जैसे रहना है वो रहे। मेरी बला से। मुझे क्या जाता है।'' वो लगभग उपेक्षा के भाव से बोल रहा था। जैसे उसे इस परिवार से कोई मतलब ही ना हो। चंद्र बाबू का सबसे छोटा बेटा जुगन जो कामचोर भी था। उसकी बीवी रजनी उसे भाई-भाभियों के खिलाफ अक्सर भड़काती रहती थी। सबसे छोटा होने के कारण जुगनू को भी बड़े भाईयों और भाभियों का कहना मानना पड़ता था। वो मन ही मन खुश हो गया। उसने सोचा चलो मेरी बीबी भी इन भाई और भाभियों के काम को कर-करके थक गई है। यही मौका है। जब हम लोग अलग हो जाएं। प्रस्ताव रखने में क्या जाता है। चलो प्रकाश भइया की राय का अनुमोदन कर दिया जाए। ज्यादा-से-ज्यादा क्या होगा। हो बाबूजी से थोड़ी बहुत डांट पड़ेगी। एक बार वो डांट डपटकर चुप हो जाएंगे। फिर तो हमेशा के लिए मजे ही मजे हैं। यही सोचकर वो योगेश और प्रकाश की हां-में-हां मिलाते हुए बोला "हां योगेश भैया ठीक ही तो कह रहे हैं। आखिर वे बेचारे कब तक अकेले ही गृहस्थी को खीचेंगे।" लेकिन चंदू बाबू को आघात सा लगा। उन्हें लगा की आजतक जब इस घरे में दो चूल्हा नहीं जला तो, अब ऐसा क्यों होगा। अलग होने का मतलब था, दिलों में गांठ पड़ना। भाइयों के बीच में मनमुटाव होना। कितने प्रेम से उन्होंने इस घर को जोड़ा था। पिताजी और बड़े भइया के मरने के बाद से आज तक इस घर में दो चूल्हे कभी नहीं जले। इसी कारण उन्होंने शादी का करने का फैसला किया था। तब उनकी मां बावेश्वरी देवी जिंदा थीं। जब चंदू बाबू की उम्र बढने लगी। और चंदू बाबू शादी की बाते को लगातार टालते रहते थे। तो एक दिन वागेश्वरी देवी ने उनसे जोर देकर कहा था "बेटा शादी कर लो, आखिर कब तक ऐसे ही रहोगे। तुम्हारे बाबूजी के

मरने के बाद मेंने किसी तरह तुम्हें पाल-पोसकर बडा किया। मेरा कोई ठिकना नहीं है। मेरी बात मान लो और तुम शादी कर लो।”

तब चंदू अपनी मां को समझाते हुए कहा था “मां; में शादी कर लूंगा; तो तुम्हें और भाभी को कौन देखेगा। मेरी बीबी आएगी तो रोज घर में किचकिच करेगी। मैं नहीं चाहता की मेरी शादी से इस घर में कलह उत्पन्न हो।” लेकिन मां ने चंदू बाबू की बात नहीं मानी। और आखिरकार चंदू बाबू को मां की बातें मानकर शादी करनी ही पड़ी थी। लेकिन आज योगेश इतना बड़ा फैसला करने जा रहा है। बगैर मेरी अनुमति के। उन्होंने योगेश को समझाना चाहा। चंदू बाबू बोले “आखिर तुम लोग साथ में रहना क्यों नहीं चाहते। क्या दिक्कत हो रही है, तुम लोगों को? मैंने इस घर को जोड़े रखे रहने के लिए क्या कुछ नहीं किया। और आज तुम लोग इतने बड़े हो गए हो की घर से अलग होने की बात कर रहे हो।”

लेकिन बहुत समझाने के बाद भी चारों भाइयों ने चंदू बाबू की बात को मारनने से इंकार कर दिया था। इस घटना के बाद हमेशा हंसते बोलते-बोलते रहने वाले चंदू बाबू अचानक से चुप-चुप से रहने लगे थे। ज्यादातर अपने कमरे में ही रहते। किसी से कुछ बोलते भी नहीं। कलावती से भी बहुत कम ही बोलते।

वो इतवार का दिन था जिस दिन चंदू बाबू ने ये फैसला किया था। आखिरी फैसला। बहुत सोच-समझकर। वो सैर करके लौट आए थे। और अखबार खोलकर अभी पढ़ना शुरू ही किया था। की ये खबर कलावती देवी ने चंदू बाबू को सुनायी “आज से लड़कों ने एक नया नियम बनाया है।” उन्होंने रहस्य को बनाए रखते हुए कहा।

“क्या मतलब मैं, समझा नहीं...।” चंदू बाबू अखबार के पनने पर से अपना ध्यान हटाकर कलावती देवी के चेहरे को बड़े गौर से निहारने लगे। उन्हें लगा की कलावती देवी का चेहरो ही आज का अखबार है। और उनकी महीन-महीन र्झुरियों के बीच बहुत सारी खबरें हैं। जिन्हें चंदू बाबू पन्ने की कोथश कर रहे हैं। कलावती देवी बिना भूमिका बांधे ही सीधे-सीधे बोयीं खिला “अबअलड़के आपका बोझ अकेले नहीं उठा सकते। उन लोगों ने मिलकर एक फैसला किया है। आज से आपकोप्रत्येक सप्ताह अलग-अलग लड़कों के यहां जाकर खाना-खाना होगा। हर आठवें दिन दूसरे लड़के की

बारी आएगी। “चूंकि कलावती देवी अभी भी सक्रिय थीं। धन्धे पर ठीक-ठाक काम करते थें। घर के ऊपर के सारे काम दूध लाना, बहुओं की जीन्ह जूरी करना। सबकी हां-में-हां मिलाना। कुल मिलाकर कूटनीतिज्ञ होना। इतने सारे गुणों के कारण ही बेटे अपनी मां कलावती देवी को हो रहे थे। नहीं तो उनको भी अलग-अलग सप्ताह में अलग-अलग लड़कों के यहां खाना खाने जाना पड़ता। जैसा की चंदू बाबू के बारे में मैंने बताया था की वो बड़े ही स्वाभिमानी आदमी थं। अपना जमीर लेकर वो जिंदा रहने वाले लोगों में से नहीं थे। कैसे आज भी चमकते हैं वो चालीस साल। उनकी चमचमाती हुई जवानी। और पूरे घर को अपने दम पर चलाने की जीवटता! नहीं बेकार ही खो दिए चंदू बाबू ने अपने चमचमाते हुए वो चालीस साथ! अपनी चमचमाती हुई जवानी! अपने मजबूत होने का एहसास! क्या बुढ़ापा कमजोरी को निशानी है। नहीं वो आज भी कमजोर नहीं हैं। वो अंदर से पहले जिसने मजबूत हैं। जैसे आज से चालीस साल पहले थे। किसी को नहीं सुनने वालों में से थे चंदू बाबू! उनके आदेश को सभी लोग मानते थे। वो किसी को गुलाम नहीं थे। सारी जवानी उन्होंने अपने घर पर राज किया था। लेकिन आज उनकी भ्रम टूट गया। वो परिवार को एक करके नहीं रख सके। शायद वो एक असफत गृहसथ कहलाएंगे। उनहें लड़कों का ये आदेश बहुत बेकार लगा। धिक्कार है ऐसी जिंदगी पर! क्या वो सिर्फ खाने के लिए ही जिंदा हैं?

बहुत भारी मन से उन्होंने कलावती देवी से पूछा “तुम क्या कहती हो? तुम्हारी क्या राय है?” कलावती देवी बड़े ही सपाट स्वर में बोझी जैसे चंदू बाबू से उन्हें कोई मतलब ही ना हो “मैं क्या बोलूं। अब जो लड़कों का फैसला है। वो है!”

फिर एक दिन अलस्सुबह चंदू बाबू का कमला खायी मिला। थे कहीं चले गए थे।

“चंदू बाबू चंदू बाबू घर नहीं चलना है क्या...?” मिश्रा जी ने जब से झकझोर तो चंदू बाबू को कहीं होश आया।

“घर-घर...हां चलना है।” वो झेंपते हुए से दुकान के बाहर निकल गए। अपने घर नहीं, मिश्रा जी के घर। चंदू बाबू अब वहीं रहते हैं।

सुरेश बाबू

बड़े-बूढ़ों ने जो कहा है वो ठीक ही तो कहा है कि, "रान्न" कि बड़े-बुजुर्गो का हमेशा आशीर्वाद ही लेना चाहिए। कभी उनकी बद्‌दुआएं नहीं लेनी चाहिए। जो भी बातें बड़ों ने कही हैं वो ठीक ही तो कहीं हैं। ये कहानी आज से पंद्रह बीस साल पुरानी है। जब सुरेश बाबू जिंदा थे। बड़े ही हंसमुख स्वभाव के थे सूरेश बाबू। मेरा उनसे परिचय उनकी दूकान को लेकर था। मैं हमेशा उनसे राशन-पानी थे खरीद के लिए ही उनसे मिलता था। आज ये कहानी लिखते समय वो। बिल्कुल मेरे सामने जीवितहो गए हैं। लगता है जैसे अब ही मुझसे बोल पड़ेंगे। जीवित लेकिन ऐसा सिर्फ लगता है। उनको गुजरे हुए लगभग छः-सात साल तो हो ही गए होंगे। में अक्सर उनके पास जब सौदा लेने जाता तो मुझसे प्यारी-प्यारी मीठी-मीठी बातें करते थे। एकदम हंसमुख किस्म के इंसान थे। लेकिन हिसाब किताब में बिलकुल सख्त थे। आद आपका चार आना भी बाकी होगा तो वो अपने खाते में लिख लेते हैं। उन्होंने अबर बत्ती के खाली डिब्बे को दोनों ओर से फाड़कर एक डायरीनुमा बुक बना ली थी। फिर उसमें कुछ पन्ने डाल कर उसको सिलाई करवा लिया था। उसी में वो अपनी छोटी-मोटी बाकी-बकाया को समय ने भी अपने बही खाने में दर्ज कर लिया था। ये तब की बात है जब सुरेश बाबू के अच्दे दिन थे। वे पने सिद्धांत के भी पक्के आदमी थे। किसी महाजन का एक रुपया भी वो बाकी-बकाया नहीं रखते थे। अरग आप

सुरेश बाबू से एक रूपया भी पामते हें। तो वो आपको आपके घर तक जाकर आपका पैसा पहुंचा आएंगे। एक नंबर के ईमानदार आदमी थे। धोती और कुर्ता उनका पसंदीदा पहनावा था। पान बहुत ज्यादा खाते थे। या यूं कह लें की पान के इतने ज्यादा शौकीन थे की अपने दुकान में ही अपने हाथों से ताजा काटा हुआ पान का पत्ता, काला, पीला सेका इलाइची और तीन सौ चौंसठ नंबर का जर्दा वाला पान उनको पसंद था। वो अपने पास सुपारी कारने वाली ... कैंची भी रखते थे। में जब भी उनको दुकान में जाता वो ज्यादातर सुपारी काटते हुए या पान लगाते हुए मुझे मिलते थे। चाय पीने के भी वे वैसे ही शौकीन थे। खैर, मैं आशीर्वाद भी बात कर रहा था। कह रहा था की आदमी को अपने बड़े-बड़े का आशीर्वाद ही लेना चाहिए। कभी उनकी बद्दुआऐं नहीं लेनी चाहिए। लेकिन अशोक बाबू और उनकी पत्नी सुरभि ने शायद यही गलती कर दी थी। जैसा की लोगों की राय है। कहा जाता है कि जहां धुआं होता है वहीं आग भी होती है। और जब सचमुच धुआं उठने लगा तो उससे सुरेश की भी आंखें जलने लगी थीं। और उनकी आंखों से पानी भी निकलने लगा था। यानी जो उड़ती-उड़ती बात मुझे और लोगों का पता चली थी। वो ये थी कि सुरेश बाबू को उनका लड़का अशोक बड़ा परेशान कर रहा है। परेशान कर रहा है का मतलब उनका वो उनको उनके ही दुकान से निकाल रहा है। हालांकि ये बात सुनने में अजीब जरूर थी। लेकिन ये बिल्कुल सच था की अशोक बाबू ने अपने पिताजी यानी सुरेश बाबू को उनके ही दुकाने से बेदखल कर दिया था। यानी अब सुरेश बाबू उस दुकान के असली मालिक नहीं थे। और अब उस दुकान पर अशोक बाबू यानी सुरेश बाबू के लड़के का हक है। उस समय कामता बाबू जिंदा थे। कामता बाबू माने कामता सिंह। कामता बाबू यानी हम दुकानदारों के मकान मालिक। सुरेश बाबू और अशोक के कहने पर ही वो मीटिंग रखी गयी थी। कामता बाबू ने एक-एक कर दोनों को अपने ऑफिस में बुलाया था। दोनों लोगों का पक्ष सुनने के लिये पहले उन्होंने सुरेश बाबू बुलाया था। क्योंकि वो दुकान के मालिक थे। और बाद में अशोक बाबू को जो सुरेश बाबू के सबसे छोटे लड़के थे। कामता बाबू ने जब सुरेश बाबू से पूछा था की आज चालीस सालों के बाद ऐसा तुम दोनों बाप-बेटों के बीच में क्या हो गया है कि तुम लोगों की बातें घर के बाहर तक सुनायी पड़ने लगी हैं।

आखिर घर की बातें तुम लोगों को घर में ही सुलझा लेनी चाहिए थी।

तब अचानक से सुरेश बाबू भर-भरकर रो ही तो पड़े थे। जैसे उनके अन्दर से कोई नदी बह निकली थी। कोई सामान्य नदी नहीं बल्कि भयंकर बरसाती नदी। जो विशाल जन-समुदाय को बहाकर खत्म कर देना चाहती थी। उनके जज्बात और उनकी जुबान साथ नहीं दे रहे थे। उन्हें खुद भी दुःख दर्द की इस बात को उन्हें आज सार्वजनिक करना पड़ रहा है। जिसको वो सबसे छुपाकर रखना चाह रहे थे। उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी की वक्त उन्हें ये दिन भी दिखाने वाला है। जिस लड़के को उन्ळोंने इतनी मेहनत से पाला-पोसा आज वो लड़का अपनी बीबी की बातों में आ गया है। आज अशोक मेरी किसी बात को नहीं मान रहा है। उन्हें याद है। जब अशोक दो वर्ष का था। होली की एक रात पहले यानी अगजा वाले दिन अचानक अशोक को निमोनिया हो गया था। उसका पूरा बदन बुखार से रे तप रहा था। सुरेश बाबू अशोक को दो बजे रात में डॉ. गुप्ता के यहां ले गये थे। गुप्ता जी ने दवा और इंजेक्शन दिया था। तब रातभर जागकर सुरेश बाबू ने अशोक की सेवा में रात भर जागते रहे हैं। प्रभावती सारी रात जागकर अशोक की पट्टियां बदलती रही थी। और सुरेश बाबू रात भर अशोक के सिरहाने बैठे रहे थे। उस शाम उनके घर में होली नहीं मनाई गई थी। वो हाली थी और एक दिन जब रामनवमी की एक सुबह सुरेश बाबू ने अपनी वह सुरभि को एक किलो ताजा बैंगन लाकर दिये और जब बैंगन को बड़े प्यार से उन्होंने सुरभि को पकड़ाया था। और बोले थे "बहू आज बहुत दिन हो गए हैं, बैंगन का भर्ता खाए हुए। लो आज बड़े ही ताजे बैंगन बाजार में मिले हैं। इनका भर्ता बना दो। आज चावल के साथ बैंगन का भुर्ता ही खाऊंगा।" तब बड़े ही उपेक्षा के भाव से सुरभि ने बैंगन के थैले को घुमाकर बाहर फेंक दिया था। और सुरेश बाबू पर लगभग चीखते हुए बोली थी "काम-धाम कुछ करते नहीं हैं। और जीभ हो गई है, दो हाथ लंबी। बुढ़ापे में आदमी को तेल-मसाले वाली चीजों से दूर ही रहना चाहिए। लेकिन इनकी आदत बिगड़ गई है। बुढ़ापे में भी दो गज की जीभ हो गई है। सांदी चीजें अच्दी नहीं लगती इनको। जब देखो चटर-मटर खाने की आदत पड़ी हुई है। यहां दिन भर आदमी को सैंकड़ों और काम रहते हैं। इनको तो कुछ समझ में ही नहीं आता है।"

इस दिन के बाद सुरेश बाबू जो भी रुखा-सूखा मिलता रथ लेते थे। कभी किसी खास चीज की मांग नहीं की थी। लेकिन जब प्रभानती के केंसर होने का सुरेश बाबू को पता चला था तोवो सन्न रह गए थे। डॉ. दा सुरेश बाबू को समझाते हुए बोले थे "देखिए सुरेश बाबू आप मेरे करीबी आदमी हैं। आपकी पत्नी की बीमारी अभी प्रारंभिक अवस्था में है। अगर कुछ खर्चा करेंगे तो हो सकता है प्रभावती कुछ दिन और बच जाए। तब शायद सुरेश बाबू के अंतस में कुछ पिघला था। नहीं वो पानी तो नहीं ही था। सुरेश बाबू को अच्छी तरह याद है। जब सन् 1965 में वो कामता मार्केट में दुकानू लेने पहुंचे थे। तब दोशटर वाला दुकान वो भी उन्होंने ही अपने परिश्रम से खड़ा किया था। सुरेश बाबू के चार लड़के थे। जयेश, रवि, जयशंकर और अशोक। दामिनी और संध्या की शादी उन्होंने कलकत्ता और बेगूसराय में कर दी थी। दोनों के बच्चे जवान हो गए थे। इधर सुरेश बाबू के तीनों लड़के अलग-अलग बिजनस करने लगी थे। बेगोदर वाले दुकान में उन्होंने अपने बेशकीमती चांदी से चमकते समय और यौवन भी खर्च किया था। पूरे तीस साल तक वो अपने दुकान में रात-दिन गदहे की तरह खटते रहे थे। प्रभवती भी परे लगन से परछाई की तरह सुरेश बाबू का साथ देती आयी थी। गृहस्थी को जोड़ने में। लेकिन जब परिवार बड़ा होने लगा और घर में बर्तन ज्यादा लड़ने -भिड़ने लगे तो। अखिरकार सुरेश बाबू को विवश होकर वो घर छोड़ना पड़ा था। साथ में वो प्रभावती को भी अपने साध ले आएं थे। तब अशोक मुश्लि से पांच साल का रहा होगा। बगोदर वाए दुकान में लड़कों की रोज की किचकिच और बहुआओं की शिकायतों ने जब प्रभावती और सुरेश बाबू का घर में जीना दूभर कर दिया तो वो बगोदर से बोकोरो चले आए थे। कामता बाबू को महज पांच सौ रूपए पगडी देकर उन्होंने दो दो शटर वाला दुकान किराए पर ले लिया था। उस समय किराया भी कितना था। मात्र सत्तर रूपए महीना। तब आजकल भी तरह चार-लाख, पांच लाख रूपए पगड़ी, (एडवांस) नहीं हुआ करता था। और यहीं आकर उन्होंने अशोक का नाम हॉली-क्रॉस स्कूल में लिखवाया था। अशोक पढ़ने-लिखने में उतना होशियार नहीं था। मोटे दिमाग का लड़का था अशोक! फिर बोकारो में भी सुरेश बाबू ने बहुत मेहनत करके भामता बाबू वाले मार्केट में दुकानं खड़ी कर दी थी। दुकान का नाम अपने छोटे बेटे अशोक के नाम से ही रखा था।

अशोक भंडार। अशोक भंडार उस समय में कोयलांचल का मशहूर गल्ला दुकान था। सुबह सात बजे से ही जब से दुकानें खुलती तब से रात ग्यारह बजे तक ग्राहकों की लाइन लगी रहती थी। इतवार के दिन तो दोनों बाप बेटों को खाना खाने की फुर्सत तक नहीं मिलती थी। उस समय यानी सन् 1965 में बोकारो में उड़िया बिलसपुरीया। बहुत थे। पैसा कोमलांचल में मानों फंका हुआ होता था। पहले मजदूरों का पेमेंट सप्ताह में होता था। फिर मजदूरों को पेमेंट पंद्रह दिनों में होने लगा। फिर मजदूरों का पेशेंट महीने में दोनों लगा। उस दौर की बातें याद करते हुए थकते नहीं हैं सुरेश बाबू। खैर, क्या पिघला था सुरेश बाबू के अंदर। पिघला नहीं था बल्कि वो टूट चुके थे। अंदर से वो प्रभाव तो की बीमारी से बेहद दुःखी थे। उन्होंने जो कमाया वो घर-गृहस्थी और बोल-बच्चे खर्च कर दिया। आज उनके हाथ में कुछ नहीं था। उनका हाथ। बिल्कुल स्वामी था। इधर सुरभि भी अपने पति के कान को भरती रहती थी। उसका कहना था की बाबूजी और मां को कहीं और रहने के लिए बोलो। सुरभि के बारे-बार के तकाजे के कारण आखिरकार एक दिन अशोक बाबू ने अपने पिताजी सुरेश बाबू से कह ही तो दिया था "शायद ये चोट सुरेश बाबू के रहे-सहे हौंसले को भी पस्त कर गई थी। और वे भारी मन से एक किराए के मकान में चले गए थे। अब प्रभावती और सुरेश बाबू अकेले ही उस घर में रहिते थे तो पप्फ (पोता) और सोनी (पोती) से हंसते-बोलते रहते थे। समय किसी तरह कट जाता था। लेकिन ये नया वाला मकान तो प्रभावती और सुरेश बाबू को काटने के लिए दौड़ता था।

"क्या सोच रहे है सुरेश बाबू!" यह सुनकर सुरेश बाबू की तंद्रा टूटी।

"हूं...कुछ नहीं...कुछ भी तो नहीं...।"

वे झेंपते हुए बोले थे।

तब भारी मन से उन्होंने डॉ. दास बाबू से विदा लिया था। जाते हुए दास बाबू से सुरेश बाबू बोले थें "दो-दो दिन में पैसे का इंतजमा करता है; दास बाबू।" मकान अलग हो चुका था। लेकिन दुकान में वो जाते थे। जाकर बैठते थे। हिसाब-किताब भी देख लेते थे। लेकिन इधर कुछ दिनों से उनका मन किसी काम में नहीं लगाता था। बहुत हिम्मत जुटाकर वो अपने बेटे अशोक से बोल पाए थे "तुम्हारी मां के इलाज के लिए कुछ रूपयों की

जरूरत है। अगर तुम्हारे पास कुछ पैसे हों तो तुममेरी मदद करो।"

तब अशोक बाबू अपने पिता पर लगभग गुस्साते हुए बोले थे "पैसा तो है लेकिन घर में एक लड़की भी तो है। उसकी मुझे शादी भी करनी है।"

सुरेश बाबू इस घटना के बाद महीनों गुमसुम से रहे थे। और आखिरकार उन्होंने प्रभावती को बचाने का एक ठोस निर्णय कर लिया था। और वे अपने दूर के एक संबंधी मोहन बाबू से बोले थे "सोच रहा हं की अपना मकान मैं बेच ही दूं। अगर कोई ग्राहक मले तो मुझे बताना।" लेकिन पता नहीं ये बात कैसे अशोक बाबू को पता चल गई थी सुरेश बाबू अपना मकान बेचना चाहते हैं। अभी सुरेश बाबू दुकाने में घुसे ही थे की अशोक बाबू ने तपाक से पूछ ही तो लिया था सुन रहा हूं की आप मकान बेचने वाले हैं।" सुरेश बाबू को आश्चर्य हुआ की आखिर ये बात अशोक को कैसे पता चली।

उन्होंने अशोक से प्रश्न के बदले प्रतिप्रश्न किया "तुमसे किसने कहा?"

अशोक बाबू भी बात को घूमाफिराकर बोले "उन्होंने दी जिससे आपने कह रखा था।"

"क्या मोहन बाबू यहां आए थे।...?" आश्चर्य से सुरेश बाबू बोले।

"हां-अभी-अभी आधे घंटे पहले आए थें। आपकी बहुत देर तक राह देखी। फिर चले गए।" अशोक बाबू अनमने भाव से बोले। फिर एक दिन सुरभि सास से आकर बोली "मांजी अगर मकान आप लोग बेंच दीजिएगा, तो हम लोग आखिर कहां जाएंगे?"

आखिर कार अशोक बाबू ने एक कड़ा फैसला लेते हुए, उस दिन अपने पिता जी सुरेश बाबू से पूछ दी तो किया था "पिताजी, आपने मकान का दाम कितना रखा है?"

हालांकि, इस बात का उत्तर देना सुरेश बाबू के लिए आसान काम नहीं था। लेकिन प्रभावती के कारण वे विवश थे। उन्हें अपने ही हाथों पाले हुए लड़के को मकान का दाम बताते हुए संकोच हो रहा था। फिर भी वो किसी तरह हिम्मत जुटाकर मुश्किल से बोल पाए थे "बेटा, मकान बनदाने में तो दस-बारह लाख रूपए लग ही गए थे। तुम्हें तो पता ही है। मकान बनवाते समय तो तुम भी तो यहीं थे।"

तब अशोक बाबू भी सुरभि की कही हुई बात सुरेश बाबू के सामने बोले बोल दी तो गए थे "बाबूजी मैंने कुछ रूपए सोनी को शादी के लिए

जमाकर के रखें हैं। कोई आठ-दस लाख रूपए तो होंगे ही मेरे पास। आप उनको ले लीजिए और मां का इलाज करवाइए।" तब अशोक बाबू ीाी ऐसी पेशकश सुनकर सुरेश बाबू की आंखे छलक पड़ी थीं! सोचा चलो देर से ही सही अशोक को सद्‌बुद्धि तो आयी। लेकिन सुरेश बाबू को इस प्रस्ताव के पीछे का स्वार्थशायद नहीं पता था। पैसा अशोक बाबू के एकाउंट में था। और एक दिन सुरभि और अशोक अपने पिता सुरेश बाबू और प्रभावती से बोले "बाबूजी ये लीजिए दस लाख रूपए का चेक और आप मां को इलाज के लिए ले जाइए। दिल्ली या बेंग्लोर। जहां भी आपको ठीक लगे।" तब चेक सुरेश बाबू को धमाते हुए सुरभि के तेवर अचानक से बदल गए थे "बाबूजी, मैं ये कह रही थी की आपको हमने जब रूपए दे ही दिए हैं। तो परसों पूर्णिमा भी है। लगे हाथ आप मकान की रजिस्ट्री भी हमारे नाम से कर ही दीजिए।"

"क्यों मांजी मैं ठीक कह रही हूं ना!" ऐसा पूछकर सुरभि शायद प्रभावती जी का दिल टटोलना चाहती थी। शैरख किसी तरह रजिस्ट्री का दिन भी आ ही गया और सुरेश बाबू ने अपना मकान अशोक बाबू और सुरभि के नाम कर दिया था।

इधर जब पैसे एकाउंट में आ गए तो सुरेश बाबू प्रभावती का इलाज के लिए बेंग्लोर लेकर चले गए। दो-तीन साल तक इलाज चला। दवा-दारू भी हुई लेकिन प्रभावती जी नहीं बचीं। वो सुरेश बाबू को छोड़कर चली गई थीं। इधर एक दिन जब सुरेश बाबू दुकान पहुंचे तो अशोक बाबू ने सुरेश बाबू को साफ-साफ दुकान में घुसने से मना कर दिया था। अशोक बाबू गरज कर बोल रहे थे। और सुरेश बाबू अशोक बाबू की बातें चुपचाप खड़े होकर सुन रहे हों। अशोक बाबू चिल्ला कर बोले "आजकल आपके गुटखा-पाने और चाय-नाश्ते के खर्चे की कुछ ज्यादा ही बढ़ गए हैं। अब दुकान पहले जैसी नहीं चलती है। मै आपके और खर्चे बर्दाश्त नहीं कर सकता। इतना कुछ हमने आपके लिए किया है। लेकिन आप यहां-वहां हम लोगों की युगली-शिकायत करते रहते हैं। बेहतर होगाआप यहां से कहीं चले जाएं। में और आपको अपने घर में नहीं रख सकता। अब रोज-रोज की किचकिच मुझे नहीं चाहिए। कभी आपको चाय टाइम पर नहीं मिलता। तो कभी आप खाना और नाश्ता को लेकर शिकायत करते हैं। बहुत हुआ अब तो! सुरभि

मेरी पत्नी है। वो नौकरानी नहीं है। जो दिन कर लोगों के लिए काम करती रहे।" आदमी खाने के लिए नहीं जीता है। आत्मसम्मान भी तो कोई चीज होती है। आत्मसम्मान को जब आदमी गिरवी रख देता है तो, वो पशु बन जाता है। जिसके सोचने-समझने की शक्ति बिल्कुल लुप्त हो हो चुकी हो। लेकिन सुरेश बाबू का आत्मसम्मान था। वो सिर ऊंचा करके जीने वाले लोगों में से थे।

"सुरेश-बाबू-सुरेश बाबू...अरे कहीं खो गए आप...क्या हुआ?...कुछ बोलिए भी तो...!" कामता सिंह मकान सालिक की आवाज पर जैसे वो चौक से पड़े थे।" "ओ-हां....नहीं-नहीं कुछ भी तो नहीं...!"

वो झेंपते हुए बोले।

इस घटना के कुछ दिनों बाद सुरेश बाबू अशोक भंडार को छोड़कर हमेशा के लिए बगोदर वाले अपने पुराने मकान में चले गए थे। वहीं उन्होंने एक पूजा भंडार खोल दिया था। फिर वे वहीं रहने लगे। फिर मैंने लगाते हुए नहीं देखा। इधर दिन तेजी से बीतने लगे। अशोक बाबू की पत्नी सुरभि को भी कोई गंभीर बीमारी हो गई थी। इधर अशोक बाबू भी बिटीज के मरीज हो गए थे। इधर कोयलांचल का बाजार भी अब फीका पड़ने लगा था। गली-मोहल्ले में राशन की दुकानें खुल गई थीं। कामता मार्के में अशोक बाबू की राशन की दुकान एक गौर जरूरी दुकान के रूप में जाना जाने लगा। धीरे-धीरे दुकान का नाम और पहचान थी धूंधला पड़ने लगा। इधर पत्नी के इलाज में अशोक बाबू ने बहुत पैसा खर्च कर डाला था। इधर उनको बीमारी भी दुकान और उसकी पूंजी ो सुरसा की तरह लील रही थी। अशोक बाबू अब चिड़चिड़े से हो गए थे। वो अब सुरभि सोनी और पपा से बात-बे-बात गुस्साते रहते थे। जब आर्थिक परेशानी ने मानसिक परेशानी को बहुत ज्यादा बढ़ा दिया तब अशोक बाबू ने फिर एकठोस निर्णय लिया। एक दिन अचानक से कामता बाबू क मार्केट वाली दुकान और सुरेश बाबू वाले मकान को उन्होंने किसी को बेच दिया था। पहले वो अपने परिवार को अपने साले के यहां पहुंचा आए। फिर कुछ महीनों के बाद अपना दुकान "अशोक भंडार" को भी बेच दिया था। दुकान-मकान बेचकर वो अपने साले के पास चले गए थे। इधर एक साल पहले मुझे पता चला की आर्थिक तंगी के कारण अशोक बाबू मानसिक रूप से भी पागल से हो गए थे। एक दिन के "दैनिक

हिंदुस्तान" पब में ये खबर बड़ी प्रमुखता से छपी थी। जिसे कामता मार्केट के लोग बड़े चाव से पढ़ रहे थे। एक ही परिवार के चार लोगों ने जहर खाकर आत्महत्या की। बहुत धुंधली तस्वीरें होने के बावजूद भी अशोक बाबू, उनकी पत्नी सुरभि, सोनी और...की तस्वीरों को लोगों ने पहचान लिया था। इसके कुछ सालों बाद सुरेश बाबू का भी देहांत हो गया था।

नोट उपरोक्त कहानी "सुरेश बाबू" के सभी पात्र, एवम् घटनाएं काल्पनिक हैं। इनका किसी भी जीवित या मृत व्यक्ति से कोई लेना देना नहीं है। अरग ऐसा होता है। तो ये केवल एक संयोग ही होगा।

किस्सा कोयलांचल का

मैं उस समय दसवीं कक्षा में था। जब मुझे प्रेमचंद का उपन्यास "गोदान" पढ़ने को मिला। "गोदान" प्रेमचंद का किसान जीवन के ऊपर लिखा महाकाव्यात्मक विमर्श है। "होरी" "धनिया" और "हीरा" ने काफी प्रभावित किया। इसके बाद प्रेमचंद का सारा साहित्य रंगभूमि, कर्मभूमि, "सेवासदन", "निर्मला", "गबन", इत्यादि सारे उपन्यास पढ़ गया। फिर उनकी कहानियां क्रमशः "पूस की रात", "अलग्योझा", "कफन", "सवा सेर गेहूं", "सम्पन्नता का दंड", "नमक का दरोगा," "सौत", जैसी कहानियां पढ़ गया।' मैं उस समय इंटरमीडियटर में था, जब मैंने प्रेमचंद कहान "सद्गति" पढ़ी। इस कहानी ने मुझे बहुत हद तक प्रभावित किया। फिर धीरे-धीरे हंस के अंक पढ़ने लगा। इसी बीच कक्षदेश के किसी अंक में एक कहानी पढ़ी थीं ये सन् 2000 की बात है। जितेंद्र भाटिया के एक स्तंभ "सोचो साथ क्या जाएगा" मैं एक कहानी पढ़ी थी उसका नाम था "नदीं का तीसरा किनारा"। इस कहानी ने भी मुझे बहुत प्रभावित किया। सबसे ज्यादा मैंने प्रियवंद से सीखा। हंस के सन् 200। के अगस्त अंग में उनकी कहानी छपी थी। "लाल गोदान कर भूत इस कहानी ओर सइके पात्र "अगनू" ने मुझे बेहद प्रभावित किया।...

इसी बीच मैंने जेब अख्तर की कहानी नामी, अम्बेदकर जयंती, रात के राही, पोस्टर चोर, और आइस बर्ग जैसी कहानियां पढ़ी। जेब अख्तर की कहानी "रात के राही।" तथा "पोस्टर चोर" ने भी काफी प्रभावित किया। सन् 2000 से शुरु होने वाला साहित्यिक रूझानू, 2006 तक चला। इधर कुछ कहानियां भी लिखी। उन्हें छपने के लिए भी भेजा। शुरू-शुरू में ज्यादातर कहानियां लौट आती थीं। बहुत निराशा होती थी। फिर भी लिखना जारी रखा। सन् 2015 तक सात-आठ कहानियां छपी। छिटपुट लिखता और छपता भी रहा। इधर कुछ दिनों में एक कहानी संकलन लायक 10-12 कहानियां हो गईं। तो सोचा चलो एक किताब निकाल ली जाए। लेकिन कहानी लिखना अलग बात है। फिर कहानी संकलन निकलवाना एक अलग बात है। इधर साहित्यिक परिवेश वृहद से बृहदतर हुआ। साहित्यिक मित्र भी बने। लेकिन संकलन निकाल पाना मुश्किल ही था। इधर एक दिन आर.डी. आनंद मेरे साहित्यिक मित्र से इस बात को लेकर चर्चा हुई। उनकी कुल 33 किताबें आ चुकी हैं। मेंने उनसे आग्रह किया। आर.डी. आनंद जी ने मेरा आग्रह माना। फिर उन्होंने "परिकल्पना प्रकाशन" के शिवानंद तिवारी जी से बात की। और उन्होंने संकलन निकालने की बात कही। और आज ये कहानी संकलन" किस्सा कोयलांचल का।" आप पाठकों के बीच उपस्थिति है। पाठकों की अदालत से बड़ी कोई अदालत नहीं है। अतः पाठक तय करेंगे की ये कहानी संकलन कैसा है।

पुनः श्च, आज वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण के इस युग में जहां मीडिया सत्ता थी कठपुतली बनी हुई है उसे आम आदमी और उसक सवालों से कोई मतलब ही नहीं है। आम-आदमी के सवाल जहां घशिये पर गल दिए गए हैं। ऐसे समय में लेखक को आम आदमी और उसके सवालों को उठाना नालिज है। ऐसे में ये काम धशिए की आवाज जैसी पत्रिकाएं बखबूी कर रही हैं। वो जन-मानस के सवालों से पीठक नहीं कर रही हें। वे अपने सामाजिक दायित्व को भली भांति निभा रही हैं। मीडिया में आजकल प्रायोजित खबरे ही दिखाई जा रही हैं। सभी को पता है। इन खबरों से किसी का भला होने वाला नहीं है। शिक्षा रोजगार मंहगाई, बेकारी की समस्याओं को मीडिया ने फ्रेम से बाहर कर दिया है। मीडिया असली वालों से बच रही रही है।

अंत में मेरा ये कहानी संकलन "प्रियंवद", "संजीवन", "जेब अखबर" और कामरेड आए.डी.आनंद जी को समर्पित।

शमीम मिंया को देखकर यह नहीं लगता था वो बुधनी के ऊपर दिवाना हो जाएगा। दिवाना मत कहिए बल्कि वो दिवाना से भी ज्यादा कुछ हो गया था। उसके घर में रहना-खाना, उठना-बैठना, उसका लेकर फिल्म देखना जाना। हालांकि उन दोनों के उम्र में लगभग डेढ़-दो दशक का अंतर था। शमीम लगभग तीस-बत्तीस साल का था और बुधनी पैंतालीस-पचास के आस-पास की थी। शमीम मिंया भरे बदन वाले हट्‌टे-कट्‌टे थे। वहीं बुधनी थुल-थुल काया की थी। बुधनी के अंदर कोई खास बात नहीं थी, जिससे शमीमर मिया उस पर लट्‌टू थे।

दरअसल शमीम मिंया के माता-पिता स्वर्ग सिधार गए थे। एक बड़ा भाई था जिससे शमीमर मिंया की बनती नहीं थी। इसलिए दोनों भाई अलग-अलग रहते थे।

बुधनी अरसल एक सी.सी.एल कर्मी थी, जो सी.सी.एल. में मजदूरी करती थी। बुधनी को हर महीने तीसर हजार रूपए सी.सी. राल से तनख्वाह के रूप में मिलती थी। बुधनी का पति मंगरा सी.सी.एल में एक खान दुर्घटना में तीन साल पहले मर गया था। सो अब बुधनी अकेली रह गई थी।

शमीम मिया पहले तो अपना एक पाल्ट्रीफार्म खोल कर चलाने की कोशिश करने लग लेकिन बिजनस में घाटा लगने के कारण उन्होंने अपना पाल्टीफार्म बंद कर दिया था और आजकल कोई दूसरा बिजनस करने की सोच रहे थे। इसीलिए उन्होंने बुधनी के साथ रहना शुरू कर दिया था। या तो कह लें कि बुधनी ने शमीम मियां को रख लिया था।

सही मायने में शमीम मिंया बुधनी के रखैला थे। बुधनी ने शमीम मिंया को एक तरह से मंगरा के मर जाने के बाद से रख लिया था। इधर शमीम मिंया भी बेरोजगार थे। उन्हें भी पैसे की तंगी रहती थी। पाल्ट्रीफार्म बंद हो जाने के बाद से उनका हाथ भी खाली रहने लगा था। तब बहुत सोच समझकर शमीम मिंया बुधनी के रखैला बनने को तैयार हुए थे।

दुर्गा पूजा का बोनस एकाउंट में आ गया था। इस बार सी.सी.एल ने चालीस हजार रूपए बोनस दिया था। इसलिए कोयलांचल में चहल-पहल थी। शमीम मिंया को बुधनी ने कह रखा था कि दुर्गापूजा में बोनस मिलने

पर वो उसके लिए एक बाइक खरीद देगी। सो, शमीम मियां को लेकर बुधनी कोयलांचल के एक छोटे से बैंक में आयी थी। बोनस मिलने के कारण बैंक में भीड़ थी। अतः बुधनी को दो घंटे लाइन में लगना पड़ा। जब उसकी बारी आयी तो बैंक कैशियर ने उसका नाम पुकारा ''बुधनी देवी किसका नाम है?'' बुधनी तत्परता से आगे बढ़ते हुए बोली ''हां सर, मेरा नाम है।''

बैंक कैशियर ने पहले उसे ऊपर से नीचे तक देखा, फिर पूछा कितना पैसा निकालना है?''

बुधनी ने सकुचाते हुए कहा ''चालीस हजार सर।'' बैंक कैशियर के माथे पर बल पड़ गए। बुधनी को लगभग डांटते हुए पूछा ''चालीस हजार एक साथ! एक साथ इतना पैसा, क्या करोगी, कहीं सूद-ब्याज वाले को पैसा तो नहीं देना है?''

बुधनी लगभग घबराते हुए बोली ''नहीं-नहीं सर, लड़का बाइक लेने के लिये बोल रहा है। इसलिये पैसे निकाल रही हूं।''

बैंक कैशियर ने निकासी फार्म के पीछे बुधनी से अंगूठा लगाने को कहा ''यहां अंगूठा लगाओ...।''

बुधनी ने निकासी फार्म के के पीछे अंगूठा लगा दिया।

कैशियर ने गिनकर चालीस हजार रुपये बुधनी को दे दिया। रुपये लेकर बुधनी जैसे ही बैंक के बाहर निकली। वहां पहले से ही किशोर मिश्रा घात लगाकर बैठा हुआ था। बुधनी को देखते ही उसकी बांछें खिल गईं।

किशोर मिश्रा दरअसल सूद-ब्याज का काम करता था। वो कोयलांचल में गरीब एवं आशिक्षित मजदूरों को कुछ कर्ज दे देता था औद बदले में उनके पासबुक अपने पास गिरवी रख लेता था। महीने में जब उस मजदूर को तनख्वाह मिलती तो वो उस मजदूर से एक निश्चित रकम के बदले अपने ब्याज के पैसे वसूलता था। यह उसका हर महीन का काम था। बुधनी जैसे बहुत सारे मजदूर उसकी चुंगल में फंसे हुए थे। किशोर मिश्रा ने पूरे कोलांचल में अपना सूद-खोरी का जाल बिछा रखा था।

बुधनी को देखते ही वो हुंसते हुए बोला ''कितनी माल निकाली हो बुधनी...?''

बुधनी ने किशोर मिश्रा को मन ही मन गाली देते हुए कहा ''दस हजार रुपया।''

किशोर मिश्रा को आश्चर्य हुआ ''अरे बोनस तो चालीस हजार मिला है। और तनख्वाह मिलाकर तो सत्तर हजार मिलना चाहिए।''

बुधने ने बचने की कोशिश करते हुए कहा ''नहीं, अभी खाली बोनस आया है। तनख्वाह नहीं चढ़ा है।''

इस पर किशोर मिश्रा बोला ''बड़ा बाबू तो बोल रहे थे कि तनख्वाह तो पहले आ गया है। बोनस बाद में चढ़ेगा।''

बुधनी ने बाल बदल दी ''मेरे एकाउन्ट में केवल बोनस आया है। तनख्वाह नहीं आया है।''

बुधनी ने आज से पांच-सात साल पहले अपने पति के इलाज के लिये किशोर मिश्रा से एक लाख रुप्ये कर्ज लिये थे। उसके एवज में उसे हर महीने साढ़े-सात हजार रुपये देने थे।

किशोर मिश्रा ने बात आगे बढ़ाई ''चलो बुधनी कोई बात नहीं मेरे ब्याज के साढ़े सात हजार रुपये दो।''

इस पर बुधनी बोली ''इस महीना पैसा नहीं है। अगले महीना देंगे।''

इस पर किशोर मिश्रा बुधनी को लगभग डांटते हुए धमकाया ''अगले महीना पूरा हिसाब करेंगे। पूरा एक लाख दस हजार लेंगे। आखिर हम लोगों का भी तो पर्व-त्योहार है।''

बुधनी सकपकाते हुए बोली ''अगले महीना कहां से देंगे, एक लाख दस हजाय रुपया?''

किशोर मिश्रा गुस्साते हुए बोला ''कहीं से भी लाकर दो। हमको सिर्फ पैसा से मतलब है। अभी तुम दस हजार दे दो बाकी अगले महीने हिसाब करेंगे।''

बुधनी को जब कुछ नहीं सूझा तो उसने दस हजार रुपये निकालकर किशोर मिश्रा को दे दिया।

बैंक से निकलकर जैसे ही वो आगे बढ़ी तो उसे सामने से कल्लू आता दिखाई पड़ा।

कल्लू अच्छी खासी डील-डौल वाला सांवले रंग का हट्टा-कट्टा मर्द था। बड़ी-बड़ी मूंछों के कारण उसका चेहरा डरावना लगता था।

कल्लू कलाली दारु चुआता है। कच्ची-पक्की दोनों तरह की दारु उसके दुकान पर बिकती है। कोयलांचल में मजदूरों का एक बड़ा तबका दारु पीता

है। लोग दारु पीकर ही यहां दिन की शुरुआत करते हैं। यहां के मजदूर जब दिन भर, काम करके थक जाते हैं तो यहां-वहां दारु की दुकान पर एक पौवा दारु के लिए गिड़गिड़ाते हुए नज र आते हैं। समय ने कल्लू कलाली का खूब साथ दिया था। वो दिन-दोगुनी रात-चौगुनी तरक्की कर रहा था।

गाहे-बगाहे वो सूद-खोरी का धंधा भी करता था। यदि अपने नशे में एक पाव दारु पी हो तो कल्लू अपने खाते में पांच पाव दर्ज करता था। इसके कारण उसका धंधा खूब चल निकला था।

बुधनी भी उसकी नियमित ग्राहक थी। कल्लू कलाली का बुधनी के पास पैसा बकाया था। बुधनी कल्लू कलाली से बचकर निकल जाना चाहती थी। इसलिये वो दूसरी ओर मुड़ गई। लेकिन कल्लू ने उसे पीछे से आवाज लगाई ''का रे बुधनी कहां जा रही है...?''

बुधनी को आखिरकार रुकना पड़ा ''कहीं नहीं...बस थोड़ा बाजार करने चली आई थी।''

कल्लू ने फिर मतलब बात कही ''तब कितना बोनस मिल रहा है तुम लोगों को इस बार।''

बुधनी बोली ''कहां मिल रहा है। कुल चालीस हजार ही तो मिला है। महंगाई कितनी बढ़ गई है।''

कल्लू बोलाब ''चलो बुधनी लगे हाथ मेरा भी हिसाब कर ही दो।''

बुधनी बोली ''तुम्हारा हिसाब अगले महीना करूंगी। इस बार पैसा नहीं बच रहा है।''

लेकिन कल्लू अड़ गया ''पिछले महीना भी तुम इस महीना के बारे में कहा था। आज मेरा हिसाब कर दो। वरना दारु बन्द कर दूंगा।''

बुधनी को खाना मत दो कोई बात नहीं। लेकिन उसे दारु चाहिए, बिना दारु के वह नहीं रह सकती।

बुधनी हारकर बोली ''बोलो तुम्हारा कितना हिसाब निकलता है?''

कल्लू ने ठोड़ी खुजलाते हुए कहा ''बारह हजार रुपये।'' बुधनो ने उसकी ओर गिनकर दस हजार रुपये बढ़ाए और आगे बढ़ गई।

जैसे ही वो आगे बढ़ी सामने से जटाशंकर साव नमूदार हुआ। जटाशंकर को देखते ही बुधनी को जैसे सांप सूंघ गया। वह हतप्रभ सोच रही थी कि अभी उसने दो लोगों को पैसे दिये हैं। अगर जटाशंकर भी अपने पैसों को

लेकर तगादा करने लगेगा तो वो राशन वाले को पैसा कहां से देगी? उसका भी तो बीस हजार के ऊपर बकाया चढ़ा हुआ है। वो अभी सोच ही रही थी कि जटाशंकर साव ने बुधनी को टोका ''का रे बुधनी। इस बार तो तुम लोगों के दोनों हाथों में लड्डू है। बोनस और पैमन्ट दोनों एक साथ मिल रहा है। 'चलो लगे हाथ मेरा भी हिसाब कर ही दो।''

जटाशंकर साव भी पहले राशन की छोटी-मोटी दुकान चलाता था। लेकिन जब धंधा नहीं चला तो उसने सोने-चांदी को गिरवी रखने का कारोबार शुरु कर दिया। राशन की दुकान की अपेक्षा ये दुकान ज्यादा मुनाफा देने लगी। फिर उसने सूद-ब्याज का काम भी शुरु कर दिया था। बुधनी ने अपनी बेटी की शादी के समय जटाशंकर साव के पास अपने कुछ गहने गिरवी रख दिए थे। और उससे पचास हजार रुपये कर्ज लिये थे। कर्ज का ब्याज बढ़ते-बढ़ते उसके रखे गहने भी खत्म कर गए। और मूल के साथ सूद, फिर सूद का मूल, फिर मूल का सूद! इस तरह डेढ़ लाख के गहने जटाशंकर साव ने मुफ्त में ले लिये थे। और बुधनी से वो आज भी पचास हजार रुपये पाता था। बुधनी गरीब मजदूर थी। उसे हिसाब-किताब कहां पता था? हर महीने जटाशंकर साव कुछ न कुछ रकम बुधनी से वसूत करता ही था। ये एक चालाक सूदखोर का शिकंजा था, जिसमें बुधनी जैसे बहुत से मजदूर फंसे हुए थे।

बुधनी जटाशंकर के सामने लगभग घिघियाते हुए बोली ''इस महीने छोड़ दो। अभी दो लोगों को बकाया पैसा दिया है। बीस हजार तो वहीं खत्म हो गए। अब राशन वाले और दूध वाले को पैसा देना है।''

जटाशंकर साव गर्म होकर बोला ''देखो भाई इस महीने हम किसी भी हाल में नहीं मानेंगे। पांच साल पहले तुमको पचास हजार रुपये दिये हैं। आखिर हमको भी तो पैसा का काम है।

बुधनी को गुस्सा आ गया, उसने प्रतिकार करते हुए कहा ''पचास हजार दिया था तो बदले में मैंने भी गहने भी तो तुम्हारे पास गिरवी रखा हुआ था। डेढ़ लाख का गहना तुमने पचास हजार में ले लिया। फिर चार हजार रुपये महीना ब्याज भी ले लिया। पांच साल का ब्याज भी अगर जोड़ोगे तो मेरे पैसे ही तुम्हारे पासस निकलेंगे!''

इस पर जटाधारी गुर्राते हुए बोला ''वो सब मैं नहीं जानता। पचास के

पांच सालों में ब्याज सहित दो लाख रुपये हुए। और तुमने मुझे दिया क्या? किसी महीने दो हजार किसी महीने चार हजार। मुझे आज कम-से-कम पंद्रह हजार दो। बाकी हिसाब अगले महीना होगा।''

बुधनी ने गुस्साते हुए कहा ''पंद्रह हजार नहीं दस हजार लो अगले महीना तुम्हारा पूरा हिसाब चुकता कर दूंगी।''

बुधनी ने गिनकर जटाशंकर साव को दस हजार रुपये दिये। और आगे बढ़ गई।

अब बुधनी शमीम मियां को लेकर कोयलांचल के एक टू-व्हीलर शो-रुम में गई। शोरुम में हीरो कंपनी की कई दोपहिया वाहनें कतार में लगी हुई थी।

बुधनी शमीम मियां की ओर देखकर बोली ''कौन-सी मोटर साईकिल लेनी है? लेलो!''

शमीम मियां ने दो-चार मोटरसाईकिल का मुआयना किया। फिर उन्होंने सुकचाते हुए कहा ''सुपर स्प्लेण्डर...!''

बुधनी ने दुकानदार से पूछा ''सुपर-स्प्लेण्डर का दाम कितना है?''

दुकानदार बोला ''नकद में साठ हजार, उधार लेने पर अस्सी हजार।''

बुधनी ने डाउनपेमेन्ट के रूप में दस हजार रुपये जमा कर दिये।

दुकानदार बुधनी से बोला ''चेक बुक लाई हो?''

बुधनी बोली ''हां लायी हूं।''

दुकानदार ने बुधनी को सात-सात हजार रुपये के दस चेक पर अंगूठा लगाने को कहा।

बुधनी ने अंगूठा लगा दिया और चेक फाड़कर दे दिया।

शमीम मियां ने मुस्कुराते हुए बाइक स्टार्ट किया। और बुधनी को लेकर चल पड़े।

घर जाते हुए बुधनी सोच रही थी कि अभी उसके पास चालीस हजार रुपये थे। और अब उसका हाथ बिल्कुल खाली है। वो राशन वाले को पैसा कहां से देगी? नई मोटरसाईकिल धूल उड़ाते हुए रफ्तार से आगे बढ़ती जा रही थी।

अंधविश्वास

कलुआ की बेटी को आज सप्ताह दिन से बुखार चढ़ा हुआ था। जोकि उतरने का नाम ही नहीं ले रहा था। कलुआ अपनी बेटी को कई हकीम-वैद्य को दिखा-दिखाकर परेशान था। लेकिन बुखार था की उतरने का नाम ही नहीं ले रहा था। उसने कई नामी-गिरामी हकीम-वैद्य के यहां चक्कर लगाकर देख लिया था। लेकिन कोई फायदा नहीं हो रहा था। वो लोगों की तरह-तरह की बातों को सुनता और उनके कहे अनुसार हर काम को करता था। लेकिन सारे उपाय करने के बाद भी बुखार ज्यों का त्यों बना हुआ था। थक-हारकर उसने आज मन बना लिया था की यह भागलपुर वाले ''ओझा के पास जायेगा। वहीं एक ओझा था जो आस-पास के गांव वालों की लगभग हर समस्या का इलाज करता था। सुबह का समय था। कलुआ के गांव से भागलपुर वाले ओझा का घर तीन किलोमीटर दूर था। निकलते अगहन मास का समय था। और अब पूस का महीना आने ही वाला था। ठढ़ अब महसूस होने लगी थी। लेकिन कलुआ आलस को परे धकेलते हुए अपनी पुरानी साइकिल पर सवार होकर भागलपुर वाले ओझा के पास चल पड़ा था। अपनी बेटी रुपिया के इलाज के लिये। वह चाहता था को चाहे उसका सब कुछ कोई ले-ले लेकिन उसकी बेटी एपिया को ठीक कर दे! ताकि वो पहले की तरह हंसने-बोलने लगे। वो पहले की तरह खेलने लगे। कुल परिवार के

नाम पर उसके तीन बच्चे थे। बड़ी लड़की एपिया, दूसरी लड़की सोना, तीसरा और सबसे छोटा उसका एक बेटा था मांगुर। जो अभी तीन साथ का था। बड़ी बेटी रुपिया आठ साल की थी। उससे छोटी सोना छह साल की थी। उसकी बीबी का नाम पार्वती था। साइकिल चलाते-चलाते उसे गर्मी का एहसास हुआ। उसने शॉल अपने कंधे से उतारकर साइकिल के आगे वाले हैंडल में टंगे थैले में डाल दिया। और फिर साइकिल चलाने लगा। साइकिल से आने-जाने के कारण उसका बहुत-सा वक्त अब बच जाता है नहीं तो पहले दो-तीन किलोमीटर पैदल चलने के दिये आधा पौने घंटे का समय लगता था। जब वो भागलपुर वाले ओझा के पास पहुंचा तो वो किसी और की समस्या का निराकरण कर रहे थे। पहले वाला अपनी समस्या बता रहा था ''बाबा मेरी बीबी को आज दस साल हो गये हैं। लेकिन कोई संतान नहीं हुई है। बाबा मैं बहुत ही परेशान हूं। मैं क्या करूं मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है। पास ही अभी-भी छटपटा रहा था। बाबा अपने पहले ग्राहक से मुखातिब हुए ''यहां आने से पहले भी किसी के पास गये हो क्या?''

पहला ग्राहक ''क्या बाबा मैं समझा नहीं।''

बगल में ही बाबा का शार्गिद, बैठा हुआ था। वो पहले ग्राहक से मुखातिब हुआ ''अरे बाबा जानना चाह रहे हैं, इससे पहले भी किसी तांत्रिक या ओझा को दिखलाये हो क्या?''

पहला ग्राहक इंकार में सिर हिलाते हुए बोला ''नहीं बाबा मैंने आपका नाम बहुत ही सुन रखा था। इसीलिये मैं किसी दूसरे के पास नहीं गया हूं। सीधे आपके पास ही आया हूं।''

भागलपुर वाले बाबा मन-ही-मन प्रसन्न हुए। फिर पहले ग्राहक से बोले ''तुम्हारा नाम क्या है?''

पहला ग्राहक ''जी मेरा नाम रमेश है।''

तब बाबा रमेश से सीधे मुखातिब होते हुए बोले ''रमेश तुम्हारी समस्या बहुत गंभीर है। और बड़ी समस्या का इलाज भी बड़ा होता है। इसके लिये कुछ खर्चा लगेगा।''

रमेशा संतान प्राप्ति के लिये कोई भी मूल्य देने को तैयार था। उसने तुरन्त कहा ''कोई बात नहीं बाबा आप उपाय बताइये।''

बाबा थोड़ी देर के लिये ध्यान की मुद्रा में चले गये। आधा घंटा के बाद वो अपने शार्गिद से बोले ''देखो मैंने रमेश की समस्या को अर्न्तमन से देख लिया है। इनको सामानों की सूची बता दो। येस सामान की व्यवस्था कर लेंगे। तो हम लोग अनुष्ठान प्रारम्भ करेंगे। फिर वो रमेश से मुखातिब होते हुए बोले ''देखो रमेश तुम्हारे यहां औलाद पैदा होगी। लेकिन उसके लिये मैं तुम्हें जो उपाय बताने जा रहा हूं। वो तुम्हें करने होंगे। इसमें जरा-सी भी भूल-चूक हुई तो समझ लो फिर सारे किये-कराये पर पानी फिर जाएगा। पहला ग्राहक रमेश, बाबा की बातों को बड़े ही ध्यान से सुन रहा था। और बीच-बीच में अपना सिर भी हिला रहा था। जैसे वो बाबा के सब बातों को मान ले तो उसके यहीं आज ही कोई बच्चा पैदा हो जाए। बाबा रमेश को सचेत करते हुए बोले ''आज के दिन और तारीख भी ठीक से याद कर लो आज से एक वर्ष तक तुम अपनी पत्नी को स्पर्श तक मत करना तुम्हें ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। और हर शनिवार और मंगलवार को अपनी पत्नी को मेरे आश्रम में छोड़ना पड़ेगा। इसके अलावा तुम सप्ताह में तीन दिन उपवास भी रखोगे। ध्यान रहे पूरे एक वर्ष तक तुम्हें संयम से काम लेना होगा। ये एक अनुष्ठान है। अगर इस परीक्षा में तुम पास हो गये तो तुम्हें एक वर्ष के अन्दर संतान सुख नसीब होगा। इसके बाद बाबा ने अपने शार्गिद को हाथ से इशारा किया था। शार्गिद अब रमेश को समझाने लगा था ''इसके अलावा तुम्हें हर सप्ताह शनिवार और मंगलवार को देशी मुर्गा और देशी दारु हो चाहिए। ज्यादा अच्छा रहेगा अगर विदेशी दारु हो क्योंकि जब बाबा को उनका मनपसंद भोग चढ़ाओगे तब तुम्हें ही फायदा होगा।'' इसके बाद उसने हवन में लगने वाली सामग्री की सूची रमेश को थमाते हुए यह भी हिदायत दी थी ''सुनो तुम ये बात किसी से कहना मत। यदि ये बात किसी और को पता चली तो बाबा के द्वारा किया गया अनुष्ठान सफल नहीं हो पायेगा। इसलिये सप्ताह में जिन दो-दिनों को बाबा ने तुम्हारी पत्नी को आश्रम लाने के लिये कहा है। उसको वहां अकेले ही आना है। दिन याद ना तुमको। शनिवार और मंगलवार। इस दिन तुम अपनी पत्नी को आश्रम के बाहर तक छोड़कर चले जाना। गलती से भी अन्दर मत आना। और हां दो देशी मुर्गा और दो बोतल दारु भी तुमको शनिवार और मंगलवार को ही लाकर देनी है। मैं तुम्हें एक बार फिर आगाह करता हूं। यदि तुमने

गोपनीयता नहीं बरती तो सारा अनुष्ठान बेकार हो जाएगा। जाओ आज से तुम्हारा ब्रह्मचर्य का जीवण शुरु होता है। अपनी पत्नी के पास गलती से भी मत जाना।''

फिर बाबा रमेश से बोले ''जाओ जाकर जो अनुष्ठान का सामान लिखवाया है। उसे लेकर आओ।''

रमेश बाबा के पैर छूकर वहीं से अनुष्ठान का सामान लेने चल पड़ा। रास्ते में वो सोचता जा रहा था। चलो ब्रह्मचर्य का पालन करने और कुछ उपाय करने से अगर मैं पिता बन गया तो कितना अच्छा होगा। साल भर की ही तो बात है। दिन जाते देर थोड़े ही लगता है। जैसे इतने साल निकल गये वहां एक साल और सही। इन्हीं आशाओं से लबरेज वो अपनी मोटर साइकिल से सामान लेने निकल पड़ा था।

रमेश को कहां पता था कि भागलपुर वाला बाबा पक्का ऐय्याश किस्म का आदमी है। और उसका शार्गिद भी एक नंबर का धूर्त है। रमेश जैसा सीधा-साधा आदमी भागलपुर वाले बाबा के झांसे में आ गया था। और झांसे में आकर ही वो धोखा खाने वाला था। बाबा का काम ही था। सीधे-साधे, भोले-भाले लोगों को ठगना और अपना उल्लू सीधा करना। खैर अब कलुआ की बारी थी। वो भागलपुर वाले बाबा के पैरों में गिर पड़ा और गिड़गिड़ाकर बोला ''बाबा मेरी बच्ची को बचा लीजिए बाबा बचा लीजिए। बाबा वो करीब सप्ताह भर से बीमार है। और उसकी बीमारी ठीक नहीं हो पा रही है।''

पहले बाबा ने कलुआ को गौर से देखाफिर ध्यानमग्न हो गये। करीब पंद्रह मिनट के बाद बाबा ने आंखें खोली और बोले ''तेरी बेटी को किसी ने कुछ कर दिया है!''

कलुआ बाबा के पैरों में गिर पड़ा ''धन्य हो बाबा धन्य हो...। आप तो अन्तरयामी हैं बाबा अन्तरयामी।''

बाबा कलुआ से बोले, मुझे तुम्हारे साथ तुम्हारी बस्ती में चलना होगा। वहीं चलकर उसके बारे में हम तुमको बताएंगे की कौन है वो जो तुम्हारी बच्ची पर बुरी नीयत रख रहा है। तुम एक काम करो, दो कम्बल दो गद्दा देशी दारु की दो बोतल और एक खस्सी का इंतजाम करो। और साथ में जो हवन करवाने की सामग्री है। उसे भी मंगवा लो। मैं परसों तुम्हारे घर आता

हूं। वहीं चलकर मैं तुम्हें बताऊंगा की कौन है वो, जो तुम्हारी बेटी को खा जाना चाहता है।''

चूंकि अगहन मास खत्म हो रहा था और पूस मास की शुरुआत होने वाली थी। इसलिये ठंठ को देखते हुए बाबा ने कम्बल और गद्दा कल्लु से मंगवाया था। जोकि कलुआ लेकर आने वाला था। बाबा एक नंबर का धूर्त्त और मक्कार किस्म का आदमी था। जो सीधे-साधे गरीब निर्धन लोगों को ठगता था।

अगले दिन कलुआ हवन की सामग्री एक खस्सी और देशी शराब की दो बोतलें लेकर बाबा के आश्रम में गया। बाबा धुनी समाये हुये बैठे थे। कलुआ के आने के थोड़ी देर बाद बाबा ने अपनी आंखें खोलीं। फिर कलुआ से बोले ''अनुष्ठान का सब सामान में ले आये हो।''

कलुआ बोला ''हां बाबा हां ले आया हूं।''

तब बाबा ने कलुआ को रोका ''लेकिन दो गद्दा और कम्बल भी मैंने तुमसे लाने को कहा था, वो कहां हैं।''

कलुआ बाबा से क्षमा मांगते हुए बोला ''बाबा गद्दा और कम्बल मेरा दोस्त नरेश लेकर आ रहा है।''

तब बाबा ने अनुष्ठान प्रारम्भ किया ॐ भगवते वासुदेवा...ॐ ऽ ऽ ऽ .... स्वाहा...।''

अनुठान जब सम्पन्न हुआ तब बाबा कलुआ से बोले ''तेरी बस्ती में एक विधवा रहती है। क्या नाम है उसका?''

कलुआ अपनी यादाश्त और पर जोर डालते हुए बोला ''हां बाबा है एक विधवा। फुलमतिया नाम है उसका।''

बाबा आंख तरेरते हुए बोला ''बस गांठ बांध लो इस बात को वही औरत गांव के बच्चों को नजर लगाती है। और तुम्हारी बेटी पर भी उसकी ही नजर है। धीरे-धीरे वो तेरी बेटी रुपिया को खा जाएगी। तुमको उसका कुछ इलाज करना पड़ेगा। समझ गये ना। ये डायन है डायन! उसको मैला पिलाकर ही उसकी तांत्रिक शक्तियों को खत्म किया जा सकता है।''

इतना सुनना था कि कलुआ की मुठ्ठियां भींच गयी। दोनों होंठों को दांतों से काटता हुआ वो बस्ती की तरफ साइकिल लेकर चल पड़ा। इधर रमेश अपनी पत्नी को लेकर बाबा के पास आ गया था। बाबा के कहे

अनुसार उसने विदेशी शराब की दो बोतलें। दो देशी मुर्गा लाकर आश्रम में पहुंचा दिया था। बाबा दारु और मुर्गा खाकर तृप्त हो चुका था। बाबा और उसके शार्गिद आए दिन लोगों को इसी तरह ठगते रहते थे। उनको राज का काम था लोगों को अपनी जरूरत के सामान के लिये ठगना। खैर किसी तरह शनिवार का दिन आया। और रमेश अपनी पत्नी शालिनी को बाबा के पास छोड़कर चला गया। आश्रम में घुसते ही बाबा की नजर कमसिन शालिनी पर पड़ी। उसने शालिनी को अपने बिस्तर पर लेटने को कहा। शालिनी का बाबा और उसके शार्गिद ने मिलकर यौन-शौषण किया। ये क्रम लगातार चलता रहा। संतान प्राप्ति की इच्छा और अपने आपको बांझ कहलाने के भय से शालिनी चुप ही रही। उसको ये भी डर था कि कहीं रमेश उसे संतानहीन या बांझ होने के कारण अपने घर से ही न निकाल दे। इस कारण बेचारी बाबा व उसके शार्गिद के हाथों में लुटती रही। इधर सुबह-सुबह गांव में ये खबर जंगल में लगी आग की तरह फैल गयी की ''फुलमतिया'' ही डायन है। कलुआ ने गांव आकर जब ये बात सोमरा नाई को बताई थी तो जल्द ही ये बात पार्वती गणेश सुगनी, अधकपारी और खुद फुलमतिया को भी तभी पता चचला थ की वो डायन है डायन!

कलुआ लगभग चीखते हुए सोमरा से बोला ''निकालो इस रांड फुलमतिया को। आज मैं इसको सबक सिखाता हूं। मेरी बेटी उपिया पर इसकी ही नज र है। ये मेरी बेटी को खा जाएगी। ये डायन है डायना। इधर गणेश और सोमरा ने फुलमतिया को झोंटा पकड़कर बाहर निकाल दिया था।

कलुआ फुलमतिया को एक लात जमाकर लगभग चीखते हुए बोला ''बोल फुलमतिया तुमने मेरी बेटी रुपिया के साथ क्या किया है। वो बीमार होकर दिन-ब-दिन गलती क्यों जा रही है। बोल तुमने उसको क्या खिलाया है। मुझे बाबा ने तेरा नाम लेकर इशारा किया है कि फुलमतिया तेरी बेटी रुपिया को खा जाना चाहती है। बोल ये सच है या झूठ है। आखिर मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है। तू अपने भूते को वापस लेती है या नहीं। जहां से तूने इस भूत को लाया है वहीं छोड़कर आ जा नहीं तो आज मैं तुझे जाने से मार दूंगा।''

इतनी बातें भीड़ को पता चलनी थी कि सारे लोग फुलमतिया पर हाथ साफ करने लगे। जिसके हाथ में जो आता वो उससे ही फुलमतिया को मारने लगा था। फुलमतिया चीखती रही, चिल्लाती रही। लेकिन किसी को

उस अबला और लाचार विधवा तरस नहीं आ रहा था। कोई लात से मार रहा था। कोई चप्पल से मार रहा था। कोई जूते से मार रहा था। तो कोई डंडे से मार रहा था। जब मारते-मारते सारे लोगों थक गये तब अधकपारी लगभग हांफते हुए बोला ''डायन विधवा को ऐसे ही नहीं खत्म किया जा सकता है। इस विधा को खत्म करने के लिये पहले फुलमतिया के बालों का मुड़न करना पड़ेगा। फिर इसको मैला पिलाना पड़ेगा। फिर इसको निर्वस्त्र करके, मुंह पर कालिख पोतकर गधे पर बिठाकर पूरे गांव में घुमाना होगा। तब जाकर डायन विधा खत्म होगी।'' अधकपारी इन बातों को ऐसे बता रहा था। जैसे वो कोई बहुत बड़ा विद्वान थे। सब लोग एक साथ बोल पड़े। हां-हां हमें इसको मैला पिलाना ही होगा। इधर चमरु कहीं से टीन के डिब्बे में मैला घोलकर ले आया था। वो भीड़ को मैले का डिब्बा थमाते हुए बोला ''पकड़ो इस चुड़ैल का हाथ आज इसकी डायन विधा ये हमेशा-हमेशा के लिये लगाम लगा ही देनी चाहिए।''

और गणेश मोहन, अधकपारी ने फुलमतिया के दोनों हाथों को पकड़कर 'जमीन' पे जबरदस्ती बिठा दिया था। फिर सोमरा नाई ने उस्तरा निकालकर फुलमतिया के बालों का मुंडन कर दिया था। फिर फुलमतिया के चेहरे पर लोगों ने कालिख मल दी थी। फिर किसी गधे को खोजकर फुलमतिया को उस पर बिठाया गया था। और गांव की सैर करवाने के लिये निकाला गया। घायल फुलमतिया को जब गांधी चौक के पास लाकर उतारा जाने लगा तब उसे होश आया। वो अपनी हालत देखकर लोगों से मिन्नत करने लगी ''नहीं-नहीं मैं डायन नहीं हूं। मुझे तुम लोग गलत समझ रहे हो। मैं एक अबला और विधवा हूं। मैंने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा है। मैं निर्दोष हूं, बिल्कुल निर्दोष। मैं डायन नहीं हूं।''

लेकिन भीड़ को फुलमतिया पर दया नहीं आयी। गांव के अनपढ़-गंवार और अंधविश्वासी लोग अपनी जिद पर अड़े हुए थे।

तभी गांव के नये-नये थानेदार राजेश जो एक दलित परिवार के थे। और पढ़-लिखकर उसी गांव में नये-नये थानेदार होकर आये थे। अपनी जीप में भागलपुर वाले ओझा और उसके शार्गिद को रस्यिों से बांधकर ले आये थे। शायद किसी ने फोन करके थाने में बतला दिया था कि उसके गांव की गरीब और विधवा अबला को कुछ लोग मार-पीट रहे हैं। जीप से उतरकर

थानेदार राजेश ने पहले भीड़ के चुंगल से फुलमतिया को मुक्त कराया। फिर अपनी जीप में पड़ी बोतल से फुलमतिया को पानी पिलाया। तब वे गांव वालों से गुस्साते हुए बोले "तुम लोगों को शर्म नहीं आती है। एक अबला-विधवा के ऊपर अत्याचार करते हुए। तुम लोगों इसकी ये क्या हालत कर दी है। तुम लोग आदमी नहीं हो जानवार हो जानवर!"

तभी भीड़ से कलुआ बोला "साहब ये डायन है डायन! इसने मेरी बेटी के ऊपर डायन किया है। मेरी बेटी पंद्रह-बीस दिनों से बीमार है ठीक हीं नहीं होती है। इस फुलमतिया ने ही मेरी बेटी को कुछ कर-करा दिया है। कुछ खिला-पिला दिया है।" गांव वालों में भी कलुआ के हां-में-हां मिलायी।

इंस्पेक्टर राजेश कलुआ और गांव वालों को लगभग डांटते हुए बोला "डायन, भूत, पिशाच कुछ नहीं होता है। सब तुम लोगों के मन का वहम है। और कुछ नहीं है। अगर तुम लोगों को विश्वास नहीं है। तो खुद इस भागलपुर वाले ओझा से पूछ लो।

उन्होंने हवलदार बजरंगी को इशारा किया "बजरंगी ने जब खींचकर दो तमाचे भागलपुर वाले ओझा को मारा तो वो किसी भूत की तरह सब सच-सच बकने लगा "नहीं कालु भाई ये फुलमतिया डायन-वायन कुछ नहीं है।

मुझे जब कोई आरोप लगाने के लिये नहीं मिला तो मैंने अपने ओझागिरी को चमकाने के लिये झूठ-मूठ को फुलमतिया का नाम ले लिया था। मार पड़ने के कारण वो जोर-जोर से रोने लगा था।"

फिर फुलमतिया से माफी मांगने लगा "फुलमतिया मुझे माफ कर दो। माफ कर दो फुलमतिया।"

इस बार इंस्पेक्टर राजेश को गुस्सा आ गया। उन्होंने बजरंगी को इशारा किया। बजरंगी ने जीप से डंडा निकाला और लगा मारने भागलपुर वाले ओझा को। इधर दूसरा हवलदार शिबू भी राजेश का इशारा पाकर ओझा के शार्गिद को डंडे से पीटने लगा था। पीटते-पीटते डंडा जब टूट गया तब जाकर बजरंगी और शिबू हवलदार के।

इधर शालिनी और रमेश को भी ओझा की सारी असलियत पता चल गयी थी। उसने रोते हुए राजेश से कहा भैया इस ओझा और इसके शार्गिद ने मेरा यौन-शोषण किया है।"

इतना सुनना था कि इंस्पेक्टर राजेश ने खींचकर एक झापड़ भागलपुर वाले ओझा को मारा और गुस्साते हुए बजरंगी से बोले " जाकर बंद कर दो ओझा और उसके शार्गिद को थाने में।"

फिर उन्होंने फोन करके एम्बुलेंस को बुलाया। थोड़ी देर में एम्बुलेंस भी आ गयी। एम्बुलेंस से डॉ. अरविन्द जब बाहर निकले तो इंस्पेक्टर राजेश ने उन्हें पहचान लिया। डॉ. अरविन्द इंस्पेक्टर राजेश ने उन्हें पहचान लिया। डॉ. अरविन्द इंस्पेक्टर राजेश के सहपाठी और मित्र थे। एम्बूलेंस से उतरे ही दोनों सहपाठी आपस में गले लग पड़े। फिर डॉ. अरविन्द इंस्पेक्टर राजेश से बोले "तुम यहां कैसे? और सब कैसा है? सब कुछ ठीक-ठाक है ना।"

तब राजेश अपने सहपाठी मित्र डॉ. अरविन्द से वर्षों बाद मिलने को खुशी दर्शाते हुए बोले "मेरी अभी यहीं, इसी थाने में पोस्टिंग हुई है। यहीं हूं। अच्छा हूं। तुम कैसे हो? तुम ठीक हो ना।"

डॉ. अरविन्द हंसते हुए बोले "हां मैं भी ठीक हूं।" फिर राजेश ने गांव वालों की करनी को डॉ. अरविन्द को बताया। डॉ. अरविन्द गांव वालों उनकी अज्ञानता और इस घटना से बेहद दुःखी हुए। डॉ. अरविन्द सबसे पहले कलुआ के घर गये। उन्होंने रुपिया का मुआना किया। पहले नब्ज टटोली। फिर आंखों को चेक किया। फिर इंस्पेक्टर राजेश से मुखातिब होते हुए बोले "यार राजेश, ये लोग ओझा-गुणी और डायन-भूत के चक्कर में इस लड़की को मार देते। इस को तुरन्त अस्पताल में भर्ती करवाना होगा। नहीं तो मरीज की जान को खतरा हो सकता है।"

फिर डॉ. अरविन्द ने एम्बुलेंस से लड़कों को स्ट्रेचर लाने को कहा। फिर उन्होंने रुपिया को स्ट्रेचर पर लदवाकर अस्पताल भेज दिया।

फिर गांव वालों और कलुआ को समझाते हुए बोले "देखो कलुआ, मैंने रुपिया को अस्पताल भेज दिया है। वहां उसके ब्लड का सैंपल किया जाएगा। मुझे अनुमान है कि ये टाइफाइड या मलेरिया का बुखार हो सकता है। इसकी जांच अस्पताल में ब्लड टेस्ट के करवाने के बाद ही पता चलेगा कि कौन-सा बुखार है। तुम लोगों को पहले ही इसे अस्पताल में भती करवा देना चाहिए था। तुम लोग जब बीमार पड़ते हो तो सीधे शहर के अस्पताल में आकर अपना इलाज करवाओ। आज दुनिया मंगल और चांद पर पहुंच गयी है। और तुम लोग आज भी पुरानी कुरीतियों को मान रहे हो।

डायन-भूत-पिशाच कुछ नहीं होता है। उन्होंने अपने सरकारी अस्पताल का कार्ड और मोबाइल नं. कलुआ को थमाते हुए समझाया था।''

फिर अपने सहपाठी और मित्र इंस्पेक्टर राजेश से विदा लेकर अस्पताल चल पड़े।

इधर इंस्पेक्टर राजेश ने बजरंगी और शीबू से कहा ''बजरंगी और शीबू तुम दोनों कलुआ, गणेश अधकपारी सोमरा को जीप मैं बैठाकर थाने ले चलो और इन पर एफ.आई.आर. दर्ज करो। आखिरकार एक निर्दोष विधवा औरत पर जुल्म करना कोई मजाक नहीं है। एफ.आई.आर. में ओझा और उसके शार्गिद पर सख्त से सख्त धाराएं लगाओ। ताकि फिर कोई ऐसी गलती करने की हिमाकत न कर पाये।

नोट मेरी इस कहानी ''अंधविश्वास'' के सभी पात्र घटनाएं काल्पनिक हैं। इनका किसी भी जीवित या मृत व्यक्ति-व्यक्तियों से कोई संबंध नहीं है। ये कहानी किसी भी मान्यता भूत-प्रेत, डायन आदि का समर्थन नहीं करती है। बल्कि इन प्रथाओं कुरीतियों का विरोध करती है।

लेखक।

सोशल नेटवर्किंग साइट

आदमी किसके लिये जीता है? अपने लिये, अपने बाल-बच्चों के लिये अपनी बीबी के लिये? मेरी एक महिला मित्र हैं। उन्होंने कहा की आप अपने दोस्त की इस कहानी को आम लोगों तक मत पहुंचाइए। ये ठीक नहीं है। बिल्कुल गंदा है। लेकिन मैं उनकी इस बता से इत्तेफाक नहीं रखता हूं। मेरे अंदर का आदमी ही मुझे बार-बार ये कह रहा है कि इस दास्तान (कहानी) को आप लोगों तक पहुंचाना जरूरी है। कोई मेरे जे हन में बार-बार हथौड़े मार रहा है कि मैं अपने अनीज की बात आप सब तक पहुंचाऊं। इसलिये मुझे मजबूर होकर ये सब बातें बतानी पड़ रही हैं। हर आदमी अपनी-अपनी राय रखता है। मैं अपनी महिला मित्र की राय से इत्तेफाक नहीं रखता। उनका अपना नजरिया है। वैसे भी सभी लोग स्वतंत्र हैं, अपनी अलग-अलग राय रखने के लिये। मेरी महिला मित्र भी स्वतंत्र है। खैर, ये उनकी व्यक्तिगत राय है! वैसे भी वे बेहद सपाट शैली में बातचीत करती हैं। मैं कभी किसी के बात का बुरा नहीं मानता हूं! मैं अलग-अलग लोगों से मिलता हूं। और लगल-अलग लोगों की बातें कुछ दिल पर लगने वाली बातें भी होती हैं। लेकिन मैं उनका भी बुरा नहीं मानता! खैर, मैं कह रहा था कि आदमी किसके लिये जीता है? अपने लिये अपने परिवार और बाल-बच्चों के लिये! अपनी बीबी के लिये. ..खैर...!

...तो ये कहानी आकाश भी है। आकाश को मैं सब 2008-09 से जानता था। चनिये मैं पहले आकाश से आपका परिचय करवा देते हूं। आकाश अपने घर का एकमात्र होन-हार और काबिल लड़का था। वो अपने मां-बाप का बड़ी ही आज्ञाकारी बच्चा था। अपने दस भाई-बहनों में पांचवें नंबर पर था आकाश। आकाश से बड़ी चारों बहनों की शादी हो चुकी थी। पांचवें नंबर का आकाश जब तीस साल का हो गया और उसकी शादी नहीं हो पा रही थी (लंबा परिवार) होने के कारण तब उसने फैसला किया कि अब उसे विवाह कर लेना चाहिए। और शायद ये विवाह (अन्तरजातीय) ही उसके जीवण की सबसे बड़ी गलती साबित हुई। ये घटना सन् 2009 की है। जब आकाश ने मुझे पहली बार बताया था ''अब मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने खुश होते हुए उससे पूछा ''ठीक है लेकिन किससे? कौन है वो लड़की?'' उसने खुश होते हुए बताया था की है एक लड़की। मैंने पूछा "आखिर बताओ तो कौन है मेरे भाई?" तब उसने विस्तार से सताना शुरू किया था "तुम्हें तो याद सा हो गया था। उन दिनों मैं बिल्कुल खाली था। तब मुझे मेरे बैग्लोर के एक दोस्त ने फोन करके बताया था की तुम्हारे लायक यहां बैंग्लोर में एक मार्केटिंग कंपनी का काम है। फडिंग और लॉजिंग फ्री है। वेतन दस हजार रूपए मिलेंगे। यदि काम करना चाहते हो तो यहां चले आओ। उन्हीं दिनों की बात है। मैं बैंग्लोर अपने दोस्त राकेश के पास चला गया था। उन्हीं दिनों मेरी दोस्ती ममता से फोन पर हो गई थी। मैं और मेरी दोस्त ममता मोबाइल पर शुरू-शुरू में थोड़ी-थोड़ी देर बातें करते थे। बाद में दोस्ती धीरे-धीरे प्यार में बदल गई। अब हमलोग फोन पर घंटों बातें करने लगे। धीरे-धीरे घंटे दिनों में, दिन सप्ताहों में और सप्ताह महीनों में और महीने साल में बदल गए। इस दौरान मैं और ममता दोनों करीब और बेहद करीब चले आए। अब हम दोनों साथ जीने और मरने की कसमें का फैसला किया। और एक दिन हम दोनों एक पार्क में मिलें। मैं उसे और वो मुझे देखकर भौंचक्क रह गए। मैं तुम्हें बता रहा हूं की मैंने जैसा ममता के बारे में संकल्प ना की थी वो बिल्कुल वैसी नहीं थी। सचकहूं तो वो मुझे बिल्कुल भी पसंद नहीं थी। अलबत्ता मेरे साथ तो वो मुझे बिल्कुल भी पसंद नहीं थी। उसके साथ उसकी छोटी बहन वाकई में बेहद खुबसूरत थी। मेरा दिल उसकी छोटी बहन पर आ गया था। खैर उसकी बड़ी बहन ममता से मुझे

पीछा छुड़वाना था। इसी बीच ममता ने अपने पिताजी से भी मुझे मिलवाया था। और उसने अपने घर में भी बातकर ली की हम दोनों शादी करना चाहते हैं। सबकुछ ठीक-ठाक चल रहा था। लेकिन इसी बीच एक ऐसी घटना घटी की हम दोनों को अलग होना पड़ा। मुझे बैंग्लोर में काम करते हुए चार साल हो गए थे। इधर मेरे छोटे भाइ ने अपना ठेकेदारी का नया काम भी शुरू कर लिया था। उस काम के लिए भ आदमी की जरूश्रत थी। इधर बैंग्लोर की कंपनी में काम की जटिलताएं बढ़ने लगी। बहुत सारे नए नियम लागू होने लगे। अब बैग्लोर में काम करने लायक माहौल नहीं था सो मुझे वापस अपने घर लौटना पड़ा। अब यहां काम करने लायक महौल नही था सो मुझे वापस अपने घर लौटना पड़ा। अब यहां काम पहले से ज्यादा बेहतर हो गया था। मे पैसे भी पहले से ज्यादा कमाने लगा था। सबकुछ ठीक-ठाक चल रहा था। बैंग्लोर से लौटे हुए मुझे तीन साल हो गए थे। अचानक एक दिन मैंने ममता से बातचीत करनें क लिए फोन लगाया था तो अचानक दूसरी तरफ से उसकी छोटी बहन रागिनी की आववज सुनकर में भौंचक्क रह गया था। मैंने जैसे ही रागिनी की आवाज फोन पर सुनी तो मैंने तुरंत कहा की तुम ममता की छोटी बहन रागिनी होना। उधर से उसने कहा था की हां मैं रागिनी ही हूं। मैंने ममता के बारे में जानना चाहा तो उसने कहा की ममता की तो शादी हो गई है। दो साल पहले। मेरे लिए खुशी का कोई ठिकाना न रहा। ये सच था की मैं ममता से प्रेम नहीं करता था। क्योंकि वा उतनी खूबसूरत नहीं थी। सही मायने में मुझे अब फिर से मेरी बात रागिनी से फोन पर घंटो होने लगी। रागिनी और मेरा प्रेम परवान चढ़ने लगा। मैं फिर से उसके प्यार में जीने-मरने की कसमें खाने लगा। वो भी मुझसे बेहद प्यार करने लगी। आरिखकर मैंने अपने घर में अपन परिवार को ये बता दिया की मैं रागिनी से प्रेम करता हूं। और उससे ही शादी करूंगा। आखिरकार वो शुभ दिन भी आया जब आकाश और रागिनी ने प्रेम-विवाह कर लिया। समय पंख लगाकर उड़ने लगा और चार साल देखते-ही-देखते बीत गए। ये एक क्रांतिकारी युग था। डिजीटलक्रांति हो गई थी। फेसबुक और व्हाटसैप की दुनिया और तकनीक आ गई थी। गृहणियां धर के काम-धंधे में कम और अपना ज्यादातर समय "फेसबुक" और "व्हाटसैप" पर बिताने लगी थीं। मेरा दोस्त आकाश तकनीक का बड़ा ही दिवाना था।

उसे तकनीक से प्रेम सा हो गया था। गोहे-बगाहे मैं डीजटल होती दुनिया का विरोध करा तो वो कहता की दुनिया अब तो हाइटेक हो गई है। फोर-जी का दौर आ गया है। फोर-जी की खासियत है की आप सामने वाले को लाइव देख सकते हैं। मैं कहता की तुम्हारी बात ठीक है। लेकिन फोर-जी तकनीक के नुकसान भी हैं। आदमी आपनी स्मरण-शक्ति को तेजी से खाने लगा है। अब गौरेया और मधुमखियां कहां दिखाई पड़ती हैं। लोगों के बीच आत्मीयता केवल नाम मात्र के लिए रह गई है। अब रिश्तो को एक तरह से ढोया ही जा रहा है। तो मैं बता रहा था की समय पंख लगाकर तेजी से उड़ने लगा और शादी के चार साल कैसे बीत गए पता नही नहीं चला। इन चार सालों में आकाश लगातार अपने काम में मसरूप रहा। उसे पैसों को कमाने की जल्दी थी। वो पैसे के पीछे भाग रहा था। इधर चार सालों में उसने अच्छे-खासे पैसे भी जोड़ रखे थे। कुछ साल और बीत गए। इन सात-आठ सालों में वो चार बच्चों का पिता भी बन चुका था। अब वो पैसे कमाने की धुन में अपने परिवार और बच्चों को भी समय नहीं दे पाता था। इधर रागिनी भी घर के कामकाज और बच्चों में ज्यादा व्यस्त रहने लगी। ऊपर से सास और ननद के तानों ने उसका जीना मुश्किल कर दिया था। इधर सात-आठ सालों में वो गलकर आधी भी नहीं बची थी। अब रागिनी एक तरह से चिड़चिड़ी रहने लगी। आकाश जब भी काम से लौटता वो अक्सर अपनी सास और ननद की शिकायत अपने पति से करती थी। लेकिन आकाश यह कहकर टाल दो की ठीक है सारे घरों में ऐसे ही हालात हैं। सभी लोग एडजस्ट कर रहे हैं। तुम भी एडजस्ट करके चलो। दिन बीतते रहें और इसी तरह कुछ और साल बीत गये। इधर रागिनी की खीज लगातार बढ़ती जा रही थी। अब रागिनी भी ढीठ हो गयी थी। उसने भी आकाश से सास और ननद की शिकायते करनी बंद कर दी थी। अब वो भीतर-ही-भीतर घुट रही थी। लेकिन आकाश से कुछ कहती नहीं थी। इसी बीच आकाश ने अपनी पत्नी को नया फोर-जी स्मार्टफोन लाकर दिया। अब रागिनी का समय ज्यादातर मोबाइल और सोशल नेटवर्किंग साइट पे बीतने लगा था। अब वो बच्चों को ना नहलाती, ना खाना खिलाती थी। किसी तरह घर के कामकाज को निपटाकर सोशल नेटवर्किंग साइट पर सक्रिय रहती। इसी तरह दो साल और बीत गये। इन्हीं दिनों एक और घटना घटी। आकाश की

एक पुरानी महिला मित्र जो उसके स्कूल के दिनों की दोस्त थी, उससे आकाश की मुलाकात हो गयी। फिर स्कूल की पुरानी यादें भी दोनों की ताजा हो गयीं। इसी बीच आकाश ने अपने स्कूल अब नेहा और आकाश में देर रात तक चैट होने लगी। इधर रागिनी घर के कामकाज और सास-ननद की रोज-रोज की किचकिच। और उसने आकाश से अब शिकायत करना भी बंद कर दिया था। इधर आकाश और नेहा (उसकी स्कूल की दोस्त) की नजदीकियां भी बढ़ती जा रही थीं। यहां मैं एक बात खासतौर से आप लोगों को बताना चाहता हूं कि पति-पत्नी का आपसी रिश्ता विश्वास पे केंद्रित होता है। लेकिन इस ''विश्वास'' शब्द का लोप रागिनी और आकाश के रिश्ते में हो चुका था। फोर-जी की तकनीक और स्मार्टफोन के ''पैटर्नलॉक'' ने ही आकाश औ रागिनी के रिश्ते को एक तरह से ब्लॉक करना शुरु कर दिया था। आजकल के फोर-जी दौर में लोग अपने-अपने मोबाइल को ''पैटर्नलॉक'' या ''पासवर्ड'' से लॉक रखते हैं। मैं आखिर ये जानना चाहता हूं कि पति-पत्नी के रिश्ते में ''प्राइवेसी'' जैसी कोई चीज क्यों होनी चाहिए? आखिर पति का पत्नी के साथ कैसी प्राइवेसी और पत्नी का अपने के साथ कैसी प्राइवेसी? इधर आकाश अपनी स्कूल की दोस्त नेहा से सम्पर्क साधे हुए था। उधर रागिनी भी फोर-जी तकनीक और सोशल नेटवर्किंग साइट पर सक्रिय रहती थी। दोनों अपनी-अपनी जिंदगी में मस्त थे। इधर आकाश के साथ उसके जीवन में बड़ा उलट फेर होने वाला था। अचानक से एक बदलाव आया और रागिनी भी किसी से चैट करने लगी। जब देर रात तक रागिनी भी चैट करने लगी तो आखिरकार आकाश ने रागिनी से पूछ ही लिया था ''ये देर रात तक तुम किससे चैट करती रहती हो?''

इस पर रागिनी ने कहा ''है एक मेरी सहेली फेसबुक पे।''

इस पर आकाश ने स्मार्टफोन रागिनी के हाथों से छीन लिया और उसने जब मोबाइल लेकर देखा तो वो किसी रोशन नाम के लड़के से चैट कर रही थी।

तब आकाश ने रागिनी के ऊपर झल्लाते हुए कहा था कि ये है तुम्हारी सहेली...रोशन कुमार!

तब रागिनी ने भी गुस्से से आकाश को जवाब दिया था ''जब तुम

अपनी दोस्त नेहा से घंटों फोन पर चैट करते हो तब तो मैंने तुमको मना नहीं किया था। फिर तुम मुझे क्यों मना कर रहे हो?''

आकाश ने बात को आगे बढ़ाना उचित नहीं समझा और शान्त हो गया।

रागिनी फिर भी नहीं मानी और वो लगातार रोशन से चैट करती रही। इधर इन सब घटनाओं के कारण आकाश तनाव में रहने लगा। वो अपनी पत्नी की कारगुजारियों को नेहा से कहता ये सब सुनकर नेहा को भी काफी दुःख और गुस्सा हुआ था। लेकिन वो कर भी क्या सकती थी। इधर रागिनी और रौशन का प्रेम-संबंध परवान चढ़ने लगा था। रागिनी अब आकाश से ज्यादा प्रेम रौशन से करने लगी थी। आकाश को अब अपनी गलती का एहसास होने लगा था। उसने गलतियों पे गलतियां की थीं। पहली गलती उसने अपनी और रागिनी के बीच ''प्राइवेसी'' को लाकर कर दी थी। दूसरी गलती उसने नेहा से संबंध बनाकर को थी। भले ही वो औपचारिक संबंध था। हम इंसानों की एक कमी कह लें या खूब कह लें होती है। यदि हम किसी पर शक कर लेते हैं तो फिर उस शक कर लेते हैं। तो फिर उस शक की को अपने अन्दर से हम निकाल नहीं पाते हैं। शक एक दीमक की तरह होता है। जो आदमी रूपी मकान को खोखला कर देता है। रागिनी को शक के दीमक ने खोखला करना शुरू कर दिया था। और उस दीमक ने अब धीरे-धीरे आकाश को भी निगलना शुरू कर दिया था। फिर दिन गुजरने लगे एक दिन आकाश मुझसे आकर कहने लगा ''यार मैं क्या बताऊं मैंने रागिनी के सोशल मीडिया वाले एकाउण्ट को हैक कर रखा है। कल रौशन ने रागिनी को एक मैसेज लिखा था। उसे मैसेज में रौशन ने लिखा था कि अगर आकाश मेरे और तुम्हारे बीच में आ गया तो मैं आकाश को जान से मार दूंगा।

मैंने आकाश का चेहरा बड़े ही गौर से देखा। उसका चेहरा डर के कारण सफेद पड़ गया था।

मैंने स्थिति की गंभीरता को देखते हुए आकाश से कहा ''तुम एक काम करो आकाश से सबसे पहले तुम अपने फेसबुक एकाऊण्ट से अपनी प्रोफाइल फोटो अपने फेसबुक एकाउंट से हटा लिया। लेकिन रागिनी ने रौशन से चैट करना बंद नहीं किया था। वो लगातार उससे चैट करती रही।

रागिनी नारी की अपनी सारी मर्यादाओं को पार कर चूंकि थी। रौशन रागिनी के अश्लील फोटो जो उसने मैसेंजर "पे रौशन को भेज दी थीं। उसको देखकर पागल सा हो गया था। वो उसके अंग-प्रत्यंगों का दिवाना सा हो गया था। इधर आकाश को रागिनी पर बिल्कुल भी विश्वास नहीं रह गया था। उसने रागिनी के "फेसबुक", "व्हाटसैप" "मैसेंजर" को हैक करके रखा था। रागिनी की सारी गतिविधियों पे आकाश न नजर रखनी शुरू कर दी थी। आकाश ने अपने आपको बहुत संभालने की कोशिश की थी। वो बार7बार रागिनी को समझाता था की रौशन अच्छा आदमी नहीं है। उससे दूर रहा करो। लेकिन ररागिनी पर तो राशन के दिखावटी प्रेम का भूत सवार था। वो रौषन के दिखावटी प्रेम को ही सच्चा प्रेम समझने लगी थी। इस बीच आकाश ने एक दिन रौशन को फोन करके डांटा भी था "तुम साले.... मादर...तुमको साले मेरी ही बीबी-प्यार करने के लिए मिली थी। मेरा ही घर बरबाद करने के लिए मिला था।"

उधर से रौशन फोन पर दहाड़ते हुए बोला था "अबे पहले आनी बीबी को संभालो...फिर मुझसे कुछ कहना...साले अपनी बीबी तो संभाल नहीं पाते हो। चले हो मुझ पर चिल्लाने।" इतना कहकर उसने फोन काट दिया था।

ये सारी बातें मुझे आकाश ने बतायी थी। जब आकाश को लगा की अब वो रागिनी को किसी तरह अपने तरफ नहीं कर सकता तो उसने कानून का सहारा लेना चाहा था। लेकिन वो भी बेकार साबित हुआ। उसने रागिनी से साफ-साफ कहा था ''जब हम एक साथ नहीं रह सकते तो हमें तलाक ले लेना चाहिए।'' इस बात के लिये शायद रागिनी तैयार थी। और वो कोर्ट पहुंच गये थे। तलाक की अर्जी लगाने के लिये। जब वे कोर्ट में पहुंचे थे तो उनका मुख्य वकील बत्रा जी की सहयोगी मृदुला जी ने समझाने की कोशिश की थी ''तुम लोगों की जोड़ी कितनी अच्छी है। फिर तुम लोग तलाक क्यों लेना चाहते हो? जबकि तुम लोगों ने प्रेम विवाह किया था।''

तब रागिनी रुआंसी होकर बोली थी ''सर आकाश मुझे बिल्कुल भी समय नहीं देते हैं। ये दिन भर पैसे के पीछे पड़े रहते हैं। पैसा कमाने के अलावा इनके पास और कोई काम नहीं है। ये लाइफ को इंज्वाय नहीं करते। रोज-रोज एक ही काम। सुबह उठो और...काय...काय...काय बस काम।''

इस काम को लेकर एक बार आकाश ने बताया था ''रौशन और उसकी दूर की एक आंटी हैं। वो मेरी पत्नी को बार-बार भड़काती रहती है। जाओ नौकरानी (रागिनी को) किचेन् में जाओ और जाकर अपने पति की गुलामी करो। अपने पति और ससुराल वालों की जाकर नौकरी करो। उनके लिये जाकर खाना बनाओ। जाओ-जाओ किचेन में जाओ!'' ये सब बाते दुःखी होकर मुझे आकाश ने ही बतायी थीं। खैर आकाश अपने इस रिश्ते को बचाने की बहुत कोशिश करता रहा। उसने एक बार रागिनी और रौशन को आमने-सामने मिलवाने का भी प्रयत्न किया था। अपने शहर से 100 किलोमीटर दूर उसने ''पालीवाटिका'' रेस्टोरेन्ट में उन दोनों को मिलवाया भी था। ताकि रागिनी रौशन को सामने से एक बार देख ले। तब जाकर कोई फैसला ले। लेकिन रागिनी का दुर्भाग्य कह लें। वो अपने फैसले से जरा भी नहीं हिली थी। होटल ''पाली वाटिका'' में रागिनी और रौशन ने मुलाकात कर ली थी। और मुलाकात के छः महीने बाद भी वो एक-दूसरे से बात कर रहे थे। आखिर आकाश कब तक बर्दाशत करता। फिर धीरे-धीरे आकाश अन्तर्मुखी-सा हो गया था। वो गुमसुम-सा रहता था। ना ही किसी से मिलता-जुलता, ना ही कहीं आता-जाता। पिछले छह महीने से वो मेरा फोन भी नहीं उठाता था। और एक दिन कुछ अप्रत्याशित हुआ। जब अचानक एक दिन सुबह-सुबह मेरे एक दोस्त राजीव ने फोन करके मुझे बताया ''की तुमको कुछ पता है की नहीं?''

मैंने राजीव से ही फोन पर ही पूछा ''क्यों-क्या हुआ?''

राजीव ने मुझे फोन पर ही मुझे बताया ''आकाश ने कल आत्महत्या कर ली है!!''

मुझे ये घटना बिल्कुल अप्रत्याशित-सी लगी थी। मुझे बिल्कुल भी ऐसा विश्वास नहीं था कि आकाश जैसा आदमी ऐसा कुछ कर सकता है। जबकि उसके चार छोटे-छोटे बच्चे हैं। खैर किसी तरह उसका अंतिम संस्कार हुआ।

इधर गाहे-बगाहे में उसकी पत्नी को कभी-कभी फोन कर लेता था। दो महीने बाद मुझे फोन पर ही जानकारी मिली थी। मैंने रागिनी को फोन करके पूछा था ''और रागिनी को फोन करके पूछा था ''और रागिनी अब रौशन ने तुमसे शादी करने के लिये तैयार है, ना?''

तब रागिनी ने ही मुझे मुझे फोन पर बताया था ''नहीं अब वो

आना-कानी कर रहा है। कह रहा है कि यदि मैं अपनी मां को मना लेता हूं। अगर मेरी मां मान गई तो मैं तुमसे शादी कर लूंगा। और अगर नहीं मानी तो मैं तुम्हें अलग फ्लैट लेकर रहने को दूंगा।'' खैर ये बात आयी-गयी हो गयी।

इसके तीन महीने बाद एक बार फिर मैंने रागिनी को फोन किया ''और रागिनी क्या हाल है?''

रागिनी ने फोन पर ही बताया ''बस जिन्दा हूं, किसी तरह!''

मैंने फिर पूछा ''क्यों क्या हुआ?''

रागिनी किस्मत को दोष देते हुए बोली ''रौशन मुझे धोखा दे रहा है। उसने मुझे व्हाट्सैप, फेसबुक पे ब्लॉक कर दिया है। मेरा फोन भी नहीं उठाता है। फिर वो बोली, मुझसे कहता है। मैं तुमसे शादी नहीं करूंगा। तुम्हें जो उखाड़ना है उखाड़ लो। इस बीच मैं उससे मिलने बैंग्लोर भी गयी थी। मैं उससे उसकी मां से मिलवाने की बात करने लगी तो वो आना-कानी करने लगा। वो मुझे अपने घर भी नहीं ले गया। उसने मुझे एक लॉज में ठहराया था। इधर सप्ताह भर पहले उसने शादी कर ली है। लड़की का नाम रुबी है। मैंने रुबी को समझाया भी की रौशन अच्छा आदमी नहीं है। उसने मुझे धोखा दिया है। हो सकता है वो तुम्हें भी धोखा दे दे। लेकिन रुबी को मेरी बातों पर विश्वास नहीं है। रौशन और रुबी ने शादी कर ली है। परसों रिसेप्शन की पार्टी है। रौशन ने अपना पुराना नंबर भी बदल लिया है। अब वो नया नंबर इस्तेमालल कर रहा है। जिसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है।''

एक बार मेरी आंखों के सामने फेसबुक, व्हाटसैप, और फोर-जी का दुष्चमत्कार कौंध उठा। वाह! रे सोशल नेटवर्किंग साइट्स!!

नोट उपरोक्त कहानी ''सोशल नेटवर्किंग साइट'' के सभी पात्र एवम घटनाएं काल्पनिक हैं। इनका किसी भी जीवित या मृत-व्यक्ति के से कोई लेना-देना नहीं है। अगर ऐसा होता है। तो ये केवल एक संयोग ही होगा।

लेखक

मुआवज़ा

सड़क के बीचों-बीच मोटरसाईकिल गिरी हुई थी। उससे थोड़ी दूरी पर गणेश पासवान दर्द से कराह रहा था। उसका बहुत सारा खून बह चुका था। यदि तत्काल उपचार नहीं किया जाता, तो उसका देहान्त भी हो सकता था। कुचलने वाले डंफर को लोग आग के हवाले करने वाले थे। भीड़ लगातार बढ़ती जा रही थी। लोग कयास लगा रहे थे कि आखिर डंफर चालक भाग कैसे गया? किसी ने उसको पकड़ा क्यों नहीं? लेकिन पुसिल केस होने के डर से कोई गणेश को उठाकर अस्पताल पहुंचाने का साहस नहीं जुटा पा रहा था।

तभी एक क्षेत्रीय न्यूज चैनल वाला पत्रकार वहां हाजिर हुआ और उसने कैमरामेन को कैमरा घायल गणेश पासवान के ऊपर फोकस करने को कहा, तो आप देख रहे हैं खबरिया चैनल झारखण्ड से लाइव एक्सक्लूसिव मनोज झा की रिपोर्ट। आप देख सकते हैं कि यह जो सड़क है जगह-जगह से गड्डों से भरी हुई है। यहां लोकल सेल से दिन भर ट्रांसपोर्टिंग का काम लिया जाता है। बड़े-बड़े डंफर सड़क से रोजाना सैकड़ों-लाखों टन कोयला विभिन्न औद्योगिक ईकाइयों को सप्लाई करते है। यहां बहुत सारे पावर प्लांट हैं, जिनसे देश का एक बड़ा हिस्सा रौशन होता है। और कम्पनियां चाहे वो कोल कम्पनियां हो या बिजली उत्पादन करने वाली, इन्हीं सड़कों को मरम्मत

नहीं करवाती हैं। आप यहां देख सकते हैं कि अभी-अभी एक सड़क दुर्घटना हुई है, जिसमें एक युवक बुरी तरह से घायल हो गया है। कोल कम्पनियों की बदइंतजामी के कारण यहां आए दिन ऐसी दुर्घटनाएं होती है।

टी.वी. पत्रकार माइक ले जाकर एक व्यक्ति से पूछता है ''क्या आप बता सकते है कि यह दुर्घटना कैसे हुई?''

भीड़ से एक युवक ''हां, यह गणेश पासवान है। मेरी ही बस्ती में रहता है। सब्जी लेने के लिए यहां बाइक से आया हुआ था। तभी यह डंफर की चपेट में आ गया।...

टी.वी. पत्रकार ''क्या आपने डंफर चालक को देख था? और क्यों आपने उसे पकड़ने की कोशिश नहीं की?''

वही युवक ''भीड़ जमा होते-होते वो भाग खड़ा हुआ।''

टी.वी. पत्रकार ''तो ये थी अभी-अभी की एक सड़क दुर्घटना, जिसमें गणेश पासवान नामक एक युवक बुरी तरह से घायल हो गया है। न तो उसे अस्पताल पहुंचाने की व्यवस्था हो रही है और न ही उसके घर वाले ही यहां आ रहे हैं।''

टी.वी. पत्रकार ने माइक लेकर भीड़ में से एक दूसरे युवक से पूछा ''यहां बिजली उत्पादन करने वाले प्लांट कोयला के जले हुए ऐश (राख) की दिन भर ढुलाई करते हैं। छाई प्रदूषण के कारण हमारे घरों में धूल की मोटी-मोटी परतें जमा हो जाती है। कोयलांचल में रहने वाले लोग सांस की बीमारी, जैसे अस्थमा, दमा से ग्रसित है। हमलोगों को सांस लेने में भी परेशानी होती है।''

टी.वी. पत्रकार माइक हाथ में लेकर ''तो अभी-अभी एक सज्जन, जिन्होंने बताया कि कोयलांचल में एक समस्या छाई प्रदूषण की भी है, जिससे यहां के लिए त्रस्त हैं। छाई प्रदूषण के कारण यहां आम आदमी के स्वास्थ्य से विद्युत उत्पादन करने वाली कम्पनियां खिलवाड़ कर रही है। लोगों को स्वास्थ्य सम्बन्धी विकारों का सामना करना पड़ रहा है। लोग दमा, अस्थमा और अन्य श्वांस सम्बन्धी बीमारियों से ग्रसित होते जा रहे है और कोई समस्या आपके कोयलांचल में है, आपमें कोई बताइगा। टी.वी. पत्रकार ने माइक लेकर एक दूसरे युवक से पूछा ''हां आप अताइए।''

दूसरा युवक ''यहां हमलोगों को साफ पानी पीने को नहीं मिलता है।

बिजली उत्पादन करने वाली कम्पनियां अपने यहां से निकलने वाले रिजेक्ट (छाई) को सीधे यहां की स्थानीय नदियों में बहा देती हैं, जिनसे हमलोगों को दूषित पानी पीने के लिए मिलता है। यहां भयंकर जल-प्रदूषण हो रहा है। पानी धीर-धीरे जहरीला होता जा रहा है। यहां की नदियों से कई प्रजातियों के जीव खत्म हो गए हैं। पानी-प्रदूषण के कारण यहां मछलियां तेजी से मर रही है। कई पानी के जींव लुप्त होने के कगार पर है। जल-प्रदूषण के कारण यहां के लोगों को पेट की बीमारियां हो रही हैं।''

टी.वी. पत्रकार माइक हाथ में लेकर ''तो जैसा कि अभी-अभी आपने सुना कि यहां जल-प्रदूषण की भी समस्या है। विद्युत कम्पनियां अपने यहां से निकलने वाले रिजेक्ट को सीधे यहां की नदियों में फेंक देती हैं, जिससे नदियों के जलीय जीव, मछलियां और अन्य प्राकृतिक जीव तेजी से नष्ट हो रही है। लोगों को पीने के लिए साफ पानी नहीं मिल पा रहा है।''

टी.वी. पत्रकार हाथ में माइक लेकर ''और कोई समस्या है आपके कोयलांचल में, कोई बताएगा?''

उस भीड़ में से एक बुजुर्ग ''हमारे कोयलांचल में सड़कों की स्थिति बहुत खराब है। सड़कों जगह-जगह से टूटी हुई है। कहीं-कहीं तो सड़क इतनी खराब है कि पता ही नहीं चलता कि सड़क में गड्ढा है या कि गड्ढे में सड़क! जिस दूरी को तय करने में मुश्किल से दो-तीन घंटे लगना चाहिए, उसको तय करने में दोगुना से भी ज्यादा समय लगता है।'' बुजुर्ग सज्जन बड़े अफसोस के साथ ये बातें बता रहे थे।

...''भीड़ में से एक आवाज आयी ''पत्रकार साहब, आप केवल अपने चैनल की खबरों की रिपोर्टिंग कीजिएगा कि इसे अस्पताल पहुंचाने की व्यवस्था भी कीजिएगा। आपके अन्दर की इनसानियत जिन्दा है कि मर गई।'' अब जाकर टी.वी. पत्रकार को एहसास हुआ कि लाइव खबरों को आम आदमी तक पहुंचाने से भी ज्यादा जरूरी काम आम आदमी की जान बचाना है।

तभी भीड़ में से कुछ सामाजिक किस्म के लोगों ने गणेश पासवान को उठाने की कोशिश करने लगे। समाजकर्मी नरेश हांसदा ने गणेश पासवान की नब्ज टटोली। गणेश की नब्ज बन्द हो गई थी। उसका शरीर ठण्डा पड़ गया था। आंखें उलट गई थी। नरेश ठण्डा पड़ गया था। आंखें उलट गई

थी। नरेश हांसदा ने भीड़ से कहा ''साथियों! गणेश पासवान को अस्पताल ले जाने से कोई फायदा नहीं है। गणेश ने दम तोड़ दिया है।''

फिर टी.वी. पत्रकार ने गणेश पासवान के चेहरे के ऊपर कैमरा फोकस करने को कहा ''जैसा कि आप देख रहे हैं, अभी-अभी जो सड़क दुर्घटना हुई थी, उसमें युवक गणेश पासवान की मौत हो गई है। यह दुर्घटना आज दोपहर दो बजे हुई है। मैं मनोज झा कैमरामैन आशुतोष के साथ खबरिया चैनल झारखण्ड के लिए।''

टी.वी. पत्रकार के चले जाने के बाद वहां के स्थानीय विधायक नरेश पाल जी वहां हाजिर हो गये। भीड़ बहुत ज्यादा बढ़ गयी थी। वहां के थाना इन्जार्च खान साहब भी दुर्घटना-स्थन पर पहुंच चुके थे। दुर्घटना-स्थल मुख्य मार्ग पर होने के कारण लाश हटवाने की जिम्मेदारी अब प्रशासन की थी। थाना प्रभारी चाहते थे कि यदि भीड़ को वो किसी तरह समझा पाते हैं, तो सड़क कम-से-कम खाली हो जाएगी। जाम खत्म हो जाएगा। देखते-ही-देखते सड़क पर एक डेढ़ किलोमीटर तक भीड़ जमा हो गई थी। थाना प्रभारी विध ाायक नरेश पाल से बोले ''सर भीड़ खाली करवाना है। आज डी. सी. आने वाले है।''

विधानसभा चुनाव निकट ही था। नरेश पाल ने अपने क्षेत्र में कोई काम इन पांच सालों में नहीं किया था, उसे अब एक संवेदनशील मुद्दा मिल गया था। सो. नरेश पाल बोले ''साथियों! कोल कम्पनियां हमारे एरिया से करोड़ों रुपये बनाती हैं। यहां से हर साली अरबों टन कोयला निकाला जाता है। और फिर उसे बड़ी-बड़ी कम्पनियां कमाती है। और जान किसकी जाती है? जानते हैं गरीब जनता की। यहां के बड़े-बड़े अफसर, नेता, रसूखदार इन्हीं कोल कम्पनियों के कारण मुटाते जा रहे हैं। इन अफसरों की आंखों में चर्बी जम गयी है। यहां के अफसर सोचते है कि इस बार का विधानसभा चुनाव मैं जीतने वाला नहीं हूं। लेकिन वे गलतफहमी में जी रहे है। आज हमारे राज्य में चारों तरफ लूट-खसोट मचा हुआ है। विपक्षी पार्टी के लोग लोकल सेल में रंगदारी वसूल करते हैं। लेकिन ज्यादा दूर नहीं है विधानसभा चुनाव। बस छः महीने के बाद सूबे में विधानसभा चुनाव होने वाले हैं। चुनाव के बाद यदि हमारी पार्टी को बहुमत मिलता है और हमारी पार्टी राज्य

में सरकार बनाती है, तो मैं आप लोगों से वादा करता हूं कि लोकल सेल में रंगदारी को मैं खत्म कर दूंगा। हमारी पार्टी आपसे विकास के बदले वोट मांग रही है। इस राज्य को बने आज बारह साल हो गये हैं, लेकिन आज झारखण्ड की स्थिति क्या है? उससे पीछे बनने वाले राज्य तरक्की कर रहे हैं। वहां प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग हो रहा है। इन बीते बारह सालों में झारखण्ड को सत्ताधारी पार्टी और क्षेत्रीय पार्टियों ने लूटा ही है। किसी ने इस राजय की भलाई के बारे में नहीं सोचा। हमारे यहां क्या नहीं है? कोयला अमुक यूरेनियम सारे कीमती प्राकृतिक पदार्थ तो हमारे राज्य में हैं। लेकिन इन प्राकृतिक पदार्थों का गैर-कानूनी ढंग से उत्खनन किया जा रहा है। पत्थर माफियाओं द्वारा अवैध रूप से पत्थरी का उत्खनन किया जा रहा है। छोटी-छोटी बच्चियों का आए दिन रेप हो रहा है। कोई बोलने वाला नहीं है। झारखण्ड लूटतंत्र का अड्डा बन गया है।''

थाना प्रभारी ने एक बार फिर विधायक नरेश पाल से अनुरोध विधायक नरेश पाल से अनुरोध किया ''सर आज डी.सी.आने वाले हैं। भीड खाली करवाइए।''

विधायक नरेश पाल अड गए ''भीड़ खाली नहीं होगी। जब तक कि मृतक गणेश पासवान के परिवार के एक सदस्य को नौकरी और दस लाख रुपये मुआवजा नहीं मिल जाता।''

थाना प्रभारी अपना-सा मुंह लेकर वापस थाना चले गए। इधर भीड़ बढ़ती जा रही थी। अब भीड़ का गुस्सा बेकाबू हो गया है। भीड़ नारे लगा रही थी ''कोल कम्पनियां मुर्दाबाद...मुर्दाबाद! मृतक के आश्रितों को नौकरी दो...नौकरी दो! मृतक के आश्रितों को दस लाख रुपये दो...रुपये दो।

इधर किसी ने डंफर में आग लगा दी थी। आग बड़ी-बड़ी लपटों में तब्दील हो गयी थी। इधर गणेश के माता-पिता भी आ गए थे। गणेश की मां मातली छाती पीट-पीटकर रोने लगी ''हाय रे मेरा बच्चा...कैसे छोड़ दिया रे हम सबको मेरा लाल...।''

जान-पहचान वाला युवक बोला...मत रो चाची, होनी को कौन टाल सकता है।''

इधर विधायक नरेश पाल गणेश के पिता को समझा रहे थे ''जाने दो

धीरु, होनी को कौन टाल सकता है। जितना दिन किस्मत में था, उतना दिन बचा। आज उसको जाना था, सो चला गया।'' इधर गणेश की पत्नी राधा पछाड़ खा-खाकर गिर जाती थी। एक बोर बेहोश होती, फिर होश में आती और फिर बेहोश हो जाती।

माहौल काफी गमगीन हो गया था। तभी थाना इंस्पेक्टर पी.लुकस वहां आए और विधायक नरेश पाल से बोले ''सर किसी तरह भीड़ हटवाइए। नहीं तो मेरी नौकरी चली जाएगी। एस.पी. साहब का फोन आया था। कह रहे थे डी.सी. आने वाले हैं। वहां से लाश फौरन हटवाओ।'' विधायक नरेश पाल भी लाश के ऊपर राजनीति करने का ऐसा अवसर हाथ से जाने नहीं देना चाहते थे, वे बोले ''जाकर कह दो एस.पी. से लाश अभी हटेगी जब तक गणेश पासवान के परिवार के एक सदस्य को नौकरी और कम-से-कम दस लाख रुपय बतौर मुआवजा नहीं मिलेगा।

तभी गणेश की मां मालती भर्राए गले से रोते हुए बोली ''क्या करने वाले आदमी की कीमत सिर्फ दस लाख रुपये और एक नौकरी ही है विधायक जी! यही मुआवजा है एक जीते जागते इनसान का।''

विधायक जी सोच में पड़ गए। इधर भीड़ उग्र से उग्रतर होती जा रही थी। इंस्पेक्टर पी. लुकस भी भीड़ की उग्रता देखकर भाग खड़े हुए। इधर नरेश पाल फिर जनता से मुखातिब हुए ''गणेश पासवान की कुर्बानी को हक बेकार नहीं जाने देंगे। सत्ताधारी पार्टी ने विस्थापितों को उनके हक आज तक नहीं दिलवाया है। अगर सूबे में हमारी पार्टी सरकार बनाती है, तो जिन-जिन लोगों की जमीन सरकार ने ली है, उनके एक परिवार को नौकरी और उनकी जमीन की वाजिब कीमत हम दिलाएंगे। झारखण्ड में विस्थापन एक गंभीर समस्या है। यहां बाहरी लोगों ने आकर यहां के मूलनिवासियों आदिवासियों की जमीन पर कब्जा जमा लिया है। उनकी जमीन का बाहरी लोगों ने उत्खनन किया। बाहर के लोगों ने यहा आकर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया है। लेकिन उनका वाजिब हक उनको कभी नहीं दिया गया। लेकिन हमारी पार्टी विस्थापितों को उनका वाजिब हक दिलायेगी।''

तभी भीड़ के बीच से पुलिस प्रशासन और डी.सी. महोदय भीड़ को समझाने के लिये आए। डी.सी. महोदय ने सभा को सम्बोधित करते हुए

कहा ‘‘हम लोगों की बात प्रबन्धन से हुई है। प्रबन्धन ने आप लोगों की बात मान ली हैं तत्काल गणेश पासवान के पिता को दो लाख रुपये का चेक दिया जा रहा है। मैं गणेश पासवान की मृत्यु से बेहद दुःखी हूँ ‘‘इतना कहते हुए डी.सी. महोदय ने दो लाख रुपये का चेक धीरू पासवान की ओर बढ़ाया।

धीरू पासवान दो लाख रुपये के चेक को बड़े गौर से देख रहे थे। उस चेक पर गणेश कहीं नहीं था। गणेश पासवान का मुआवजा था दो लाख! या दो लाख का मुआवजा था गणेश पासवान-यह बात धीरू पासवान समझ नहीं पा रहे थे। भीड़ धीरे-धीरे छंटने लगी थी।

घटना एक गांव की

भीमा मेरे बचपन का दोस्त था। हमलोग एक ही जगह एक ही बस्ती में रहते थे। भीमा का पूरा नाम भीम लाल तुरी था। उसकी मां का नाम पारो ऊर्फ पारबती था। मेरी दोस्त भीमा हिंदू भी था और मुसलमान भी। सुनने में यह बात अजीब लग सकती है, लेकिन यह सच है। उसकी मां पारो ऊर्फ पारबती हिंदू थी, लेकिन उसका बाप सत्तार मियां मुसलमान था। पारों ने प्रेम-विवाह किया था, इसलिये उसका घर बस्ती के सबसे आखिर में था। पारों को समाज से निकाल दिया गया था। कारण यह था कि उसने प्रेम-विवाह किया था, वो भी एक मुसलमान के साथ। अगर किसी हिंदू के साथ किया होता, तो और बात थी।

खैर, भीम लाल का पिता सत्तार मियां पेशे से कसाई था। वो खस्सी का मीट बेचने का काम करता था। सत्तार मियां ने पारो से शादी करने के बाद एक दूसरा विवाह भी किसी मुसलमान युवती से किया था। उस मुसलमान युवती का नाम रूखसाना था। लेकिन जब से सत्तार मियां ने रूखसाना से शादी की थी, तब से वो पारो से मिलने-जुलने कभी-कभार ही आ पाता था। ज्यादातर वो अपने नई बीबी रूखसाना के साथ ही रहता था। कभी-कभार ही वो भीम लाल की मां अर्थात् पारो से मिलने आता था। वो भी दिन में नहीं बल्कि रात में। रातभर वो पारबती के साथ सोता और सुबह पौ फटने

से पहले चला जाता था। बस्ती में लोग दबी जुबान से यह भी कहते थे कि पारो को सत्तार मियां ने रख लिया है। लेकिन पारो के सामने कोई कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था, क्योंकि पारो गरम दिमाग की सनकी किस्म की महिला थी। वो जिस-तिस से बात-वे-बात पर लड़-भीड़ जाती थी। किसी की मजाल नहीं थी कि लड़ाई में पारो से कोई जीत पाता। वो एक दबंग किस्म की महिला थी।

बचपन की दोस्ती के कारण हमलोग भीम लाल के घर जाया करते थे। वैसे वो मेरा जिगरी दोस्त नहीं था, लेकिन हमलोग साथ-साथ एक ही स्कूल में पढ़ते थे। भीम लाल आठवीं क्लास तक मेरा सहपाइी रहा। बाद में उसने पढ़ाई छोड़ दी। आजकल वो दिहाड़ी मजदूर का काम करता है।

भीमलाल का घर बस्ती के सबसे आखिरी सिरे पर था। उसका मकान बहुत बड़ा नहीं था। तीन कमरों वाले मकान में भीम लाल और उसकी मां पारो रहते थे। भीम लाल के आंगन में अमरूद का एक पेड़ था। कच्चे और पक्के अमरूद उसके पेड़ में लगे होते थे। वो मुझे बहुत से अमरूद तोड़ कर देता था। उसके आंगन में ही हमलोग प्रायः खेलते थे। हाई स्कूल तक आते-आते भीम लाल ने पढ़ाई छोड़ दी थी। वो अब जुए और शराब में अपना ज्यादातर समय बिताने लगा था। समय धीरे-धीरे बीतने लगा। मैं पढ़ाई के सिलसिले में गांव छोड़कर शहर आ गया और लगभग पांच साल के बाद अपने गांव लौटा था।

खाना खाकर अभी मैं लेटा ही था, तभी मुझे भीम लाल के घर में हो-हल्ला सुनाई पड़ा। मेरा और भीम लाल का घर पड़ोस में ही था। हो-हल्ले की आवाज सुनकर मैं उसके घर की ओर चल पड़ा। भीम लाल के घर में दस-बारह लोग जमा हो गए थे। उनमें से कुछ लोग चौधरी के भी थे। चौध री का गांव से बाहर ठेकेदारी का काम था। वो मजदूरों को ठेका मालिकों को सप्लाई का काम करता था। बदले में उसे प्रति मजदूर कमीशन मिलता था। उसने अपना ऐ होटल भी खोल रखा था। जिससे अच्छी-खासी आमदनी हो जाती थी। इधर उसने सूद/ब्याज का काम करना चालू कर दिया था। वह गांव के कम पढ़-लिखे मजदूरों को मोटी ब्याज पर रुपये भी उधार देता था। इस प्रकार उसने बहुत से मजदूरों को अपने सूद/ब्याज के जाल में फंसा लिया था।

आज भीम लाल के घर में पंचायत लगी थी। गांव का प्रधान कुर्सी पर बैठा हुआ था। बगल में चौधरी और अन्य पंच बैठे हुए थे। भीम लाल भी वहीं जमीन पर उकडूं बैठा हुआ था।

ग्राम प्रधान ने हुक्के के कश लगाकर धुआं बाहर की ओर छोड़ते हुए भीम लाल से पूछा ''तुम चौधरी से कम से पैसे ले रहे हो?''

भीम लाल ने अनमने भाव से जवाब दिया ''करीब साल भर से।''

ग्राम प्रधान ने चौधरी को गौर से देखा। चौधरी ने भीम लाल की बातों का अनुमोदन सिर हिलाकर किया।

तब ग्राम प्रधान सिर हिलाकर भीम लाल से मुखातिब हुआ ''कितने पैसे लिये हैं तुमने चौधरी से?''

भीम लाल बोला '6ठीक से याद नहीं।''

ग्राम प्रधान ने फिर से पूछा ''ठीक से याद नहीं मतलब!'' ग्राम प्रधान के स्वर में आश्चर्य था।

भीम लाल बोला ''कभी सौ रुपये, तो कभी पांच सौ रुपये और कभी हजार रुपये करके लिया था।''

ग्राम प्रधान हुक्के की निगाली मुंह से बाहर निकाल कर बोला ''तुमने अब तक कितने रुपये उधार लिये हैं, तुम्हारे पास इसका हिसाब है?''

भीम लाल ने उत्तर दिया ''नहीं, मेरे पास कोई हिसाब नहीं है।''

अब चौधरी की ओर देखकर ग्राम प्रधान बोला ''बताओ चौधरी तुम्हारे कितने रुपये भीम लाल के पास निकलते हैं?''

चौधरी ने भीम लाल को देखते हुए कहा ''दो लाख रुपये।''

भीम लाल ने तुरन्त प्रतिवाद किया ''दो लाख रुपये मैंने चौधरी से कब लिये?'

इस पर चौधरी ने अपनी आंखें तरेड़ते हुए कहा ''ग्राम प्रधान जी इसने कभी हजार रुपये, कभी पांच हजार रुपये करके पूरे साल भर में मुझसे दो लाख रुपये लिये हैं।''

ग्राम प्रधान ने बात से संभालते हुए कहा ''अच्छा बताओ चौधरी तुम्हारे पास इसका हिसाब है कि भीम लाल ने तुमसे कब-कब और कितने पैसे लिये थे।''

इतना सुनना था कि चौधरी तपाक से बोला ''हां-हां हिसाब है।''

देखिए ग्राम प्रधान जी ये खाता में हिसाब लिखा हुआ है ''इतना कहते हुए उसने खाता निकालकर ग्राम प्रधान को दिखाया।

कुछ देर तक खाता देखने के बाद ग्राम प्रधान ने भीम लाल से कहा ''खाता में तो सचमुच तुम्हारे नाम से दो लाख रुपये निकलते हैं।''

भीम लाल का कुछ सूझ नहीं रहा था। उसके पास कोई हिसाब-किताब नहीं था। उसे जब भी दारू की तलब होती, वो चौधरी के पास जाता और उससे हजार पांच सौ रुपये उधार मांग लेता था। चौधरी भी कभी भीम लाल को मना नहीं करता था। उसने जब जितने पैसे मांगे, चौधरी ने खुले हाथ से भीम लाल को पैसे दिये। दरअसल, चौधरी की नजर भीम लाल के मकान पर थी। वो उसके मकान को हथियाने की फिराक में था। इसलिए भीम लाल को जब तक रुपये देता जाता था, ताकि उसका मकान वो हड़प ले। कुछ महीने पहले उसने कहा भी था कि अगर भीम लाल उसके पैसे नहीं दे सकता, तो अपना मकान ही उसके नाम रजिस्ट्री कर दे। लेकिन भीम लाल नहीं माना था। उसने कहा था कि वो धीरे-धीरे करके उसका सारा कर्जा चुका देगा।

ग्राम प्रधान ने अचानक फैसला सुनाते हुए कहा ''देखो भीम लाल, चौधरी के मुताबिक तुमने उससे दो लाख रुपये उधार लिये हैं। इसलिऐ तुम्हें दो लाख रुपये चौधरी को देने होंगे। बोलो ये पैसे तुम चौधरी को कब दोगे?''

इस पर चौधरी ने तुरन्त प्रतिवाद किया ''ये क्या पैसा देगा। इसे दिन भर दारू पीने से फुर्सत मिलेगी तब ना।''

इस पर भीम लाल गुर्राते हुए बोला ''कमीने! तेरी नजर मेरे मकान पर है ना, तू मेरा मकान हड़पना चाहता है ना। मैं तेरा खून कर दूंगा।''

इस पर ग्राम प्रधान ने भीम लाल को डांटते हुए कहा ''चुप रहो! एक तो उधार लेते हो, ऊपर से पैसे नहीं लौटाते और अब दारू पीकर गालियां दे रहे हो।''

ग्राम प्रधान, चौधरी से मुखातिब होकर बोले ''बोलो चौधरी तुम क्या चाहते हो?''

चौधरी ने भीम लाल को आंखें दिखाते हुए कहा ''मुझे मेरे पैसे वापस चाहिए और वो भी सूद के साथ!''

ग्राम प्रधान ने भीम लाल से कहा ''तुम दो लाख रुपये चौधरी को कब तक और कैसे दोगे?''

भीम लाल नर्म पड़ते हुए बेचारगी के साथ बोला ''मेरे पास पैसे नहीं हैं।''

ग्राम प्रधान, चौधरी की ओर देखते हुए बोले ''चौधरी अब बताओ क्या किया जाए।''

चौधरी ने अन्दर ही अन्दर कुटिलता से मुस्कराते हुए कहा ''अगर भीम लाल पैसे नहीं दे सकता, तो अपना मकान मेरे नाम से रजिस्ट्री करवा दे।''

भीम लाल ने प्रतिवाद किया ''अगर मैं मकान दे दूंगा तो रहूंगा कहां।''

चौधरी बोला ''मकान नहीं दे सकते तो, मेरे पैसे वापस दे दो।''

अन्त में पंच परमेश्वर ने फैसला सुनाया कि भीम लाल को अपना मकान चौधरी को बेचना पड़ेगा। इस फैसले से आश्वत होकर ग्राम प्रधान, चौधरी से मुखातिब हुए ''चौधरी, भीम लाल मकान अब आपको हुआ। चूंकि भीम लाल चौधरी से लिये दो लाख रुपये चुकाने में असमर्थ है, अतः चौधरी मकान की कुछ और कीमत देकर भीम लाल का मकान अपने नाम से रजिस्ट्री करवा सकते हैं। यह फैसला हम पंचों ने किया है।''

इस पर भीम लाल की पत्नी दुलारी रोते हुए बोली ''हम अपने दोनों बच्चों को लेकर इस महंगाई के जमाने में कहां जाएंगे सरकार! दया करो हम पर पंच परमेश्वर! दया करो!

तब ग्राम प्रधान, भीम लाल से मुखातिब हुए ''कितनी जमीन है तुम्हारी भीम लाल?''

भीम लाल तब बड़ी मुश्किल से बोल पाया ''चार डिसमिल।''

ग्राम प्रधान ने चौधरी से पूछा ''कितने पैसे होने चाहिए चौधरी चार डिसमिल जमीन के?''

चौधरी बोला ''बाजार के भाव तो पचास हजार रुपये बनते हैं।''

ग्राम प्रधान फिर बोले ''तो चार डिसमिल के दो लाख रुपये हुए हैं ना।''

चौधरी बोला हां दो लाख रुपये हुए।''

भीम लाल खिसियाकर बोला ''मुफ्त में जमीन लेना चाहते हो। बाजार भाव एक लाख रुपये डिसमिल है। एक लाख रुपये डिसमिल से एक रुपये कम में मैं नहीं बेचूंगा।''

चौधरी ने प्रतिवाद किया ''दो लाख रुपये का ब्याज भी एक साल में एक लाख रुपये होता है। मैं भी तीन लाख रुपये से कम नहीं लूंगा।''

तब ग्राम प्रधान ने लगभग फैसला देते हुए कहा ''देखो भीम लाल, तुम्हारी जमीन की कीमत हम पंचों ने पचहत्तर हजार रुपये डिसमिल लगाई है। चार डिसमिल जमीन के तीन लाख रुपये हुए। चौधरी तुमसे दो लाख रुपये पाता है। अब चौधरी तुमको एक लाख रुपये और देगा, और यह मकान तुमको चौधरी को कल यानी सोमवार को व्यवहार न्यायालय में रजिस्ट्री करवाना होगा।'' ग्राम प्रधान के स्वर में सभी पंचों ने हां में हां मिलायी। ग्राम पंचायत के फैसले का मसौदा तैयार किया गया। सादे कागज पर सारी शर्तों को लिखा गया। फिर भीम लाल को रेवेन्यू टिकट पर हस्ताक्षर करने को कहा गया।

ग्राम प्रधान ने भीम लाल से कहा ''यहां हस्ताक्षर करो।'' भीम लाल ने आहत भाव से रोते हुए मसौदे पर हस्ताक्षर कर दिया।

शाम को घूमते-घूमते मेरा एक दोस्त चौपाल में मिल गया। हालचाल पूछने के बाद मैंने आज की पंचायत का किस्सा उससे छेड़ दिया।

मैंने उससे पूछा ''यार मुंशी, भीम लाल की ऐसी दशा कैसे हो गयी?''

थोड़ी देर तक मुंशी मुझे देखता रहा और फिर बोला ''तुम्हें तो मालूम है कि मिडिल पास करने के बाद भीम लाल दिहाड़ी का काम करने लगा था। दिहाड़ी का काम करते-करते उसे दारू पीने का चस्का लग गया था। फिर वो बुरी संगति में पड़कर जुआ खेलने लगा, इसी जुए की लत का फायदा चौध री ने उठाया और उसे रुपये उधार देने लगा। चौधरी को मालूम था कि एक मजदूर उधार लेने के बाद उधार लिये गये पैसे कभी नहीं चुका पाता है। कारण कि उसे जुए और शराब से फुर्सत ही नहीं मिलती है। भीम लाल की कमजोरी चौधरी ताड़ गया था, इसलिए वो भीम लाल को कर्ज देता चला गया। चौधरी जानता था कि भीम लाल कम पढ़ा-लिखा है। उसे रुपये पैसे का हिसाब रखना नहीं आता है। उसने भीम लाल को रुपये दिये पचास हजार और पंचायत में बताया दो लाख। क्या करोगे अंधे के हाथ में बटेर

लग गयी थी।''

मुझे भीम लाल के बारे में उत्सुकता होने लगी थी। मैंने फिर पूछा ''उसकी मां का क्या हुआ मंशी।''

मुंशी ने घृणा से मुंह टेढ़ा कर लिया, फिर बोला ''अब क्या बताऊं तुम्हें। ये भीम लाल अपनी मां को इधर कुछ दिनों से मारने-पिटने लगा था। बेचारी को खाना भी नहीं देता था। वो यहां-वहां जिसके-तिसके यहां भीख मांग कर खाती थी। बेचारी की बड़ी दुगर्ति हुई। भीम लाल के जैसा बेटा भगवान दुनिया में किसी को न दे। उसकी मां अन्म में पागल होकर मर गयी। उसी का श्राप लगा है शायद भीम लाल को।''

मैंने मुंशी से विदा ली। बस का समय हो चला था। मैंने घड़ी देखी शाम के चार बज गये थे। मुझे शहर वापस जाना था।

कैद

यह कहानी वास्तव में सत्य घटना पर आधारित है। यह धनबाद जिले के एक प्रखंड की कहानी है। यहां के मजदूरों को बहला-फुसलाकर पटना ले जाया गया और फिर उन्हें शारीरिक और मानसिक यातनाएं दी गईं। उन्हं आर्थिक रूप से किए गए वादों से बाद में मुकर गया और उन्हें तमाम तरह की यातनाएं मिलती रहीं। ज्ञातव्य हो कि वो बाद में हालांकि वहां से भाग आए थे। लेकिन सबसे साथ ऐसा नहीं होता।

गर्मी धीरे-धीरे बढ़ रही थी और साथ ही साथ कम्पाउण्ड के बाहर जूतों की चरमराहट भी तेज होने लगी थी। शायद आज ईंट-भट्ठे का मालिक दिलावर खान आने वाला था। जूतों की कवायद एक बार फिर तेज हो गईं दिलावर खान का ख्याल आते ही विष्णु के शरीर में झुरझुरी-सी फैल गई। लगा उसके जिस्म के तमाम रोंगटे उठ खड़े हुए हों। लम्बा-चौड़ा कद, ऊपर से शेरवानी धारण किए रहता। कभी सफेद तो कभी काली। घनी और ऐंठदार मूंछों के कारण में बड़ा भयानक लगता। शक्ल बिल्कुल काला था, गोया आदमी न हो, कोयले का ढेर हो। उसके साथ दो सिपाही संगीनें चढ़ाए हुए आते। उनके आते ही पूरे कम्पाउण्ड में काम इस तेजी से चलने लगता, मानो हाथ न हो स्वचालित रोबोट मशीनें हो। उनके आते ही शोर-शराबा

बहुत बढ़ जाता, ऐसा लगता कि हर कोई कितना व्यस्त है अपने-अपने काम में। बहरहाल उसे अपने पास आते हुए कोई देखता, तो ज्यों-का-त्यों हो जाता, गोया वे इंसान न होकर कोई गैर हंसानी चीजें हों।

आते ही वो साथ वाले सिपाहियों से पूछता ''तो क्या हाल है हन लोगों का? काम करने से इंकार तो नहीं कर रहे हैं?''

फिर वो कच्ची ईंटों के ढेर की ऊंचाई को देखता और ऊंचाई कम होने पर वो मजदूरों पर बेतहाशा गुस्साता, साथ आए सिपाहियों को हिदायत देता कि इन लोगों से सख्ती से काम लो, नहीं मानें तो दम भर मारो। इतना मारो की मौत-की-सी शिद्दा का तस्व्वुर हो जाए।

कदाचित विष्णु उसकी तुलना अमिताभ बच्चन अभिनीत फिल्म मिस्टर नटवर खान को शेर का खौफ दिखाकर गांव वालों को कैद कर बंधुआ मजदूरी करवाता है। इस अमजद खान और दिलावर खान से कहीं कुछ अन्तर है? नहीं शायद बिल्कुल नहीं। क्योंकि वो अमजद खान के चरित्र से भी दो कदम आगे निकल चुका है। सारी बर्बरता को पार करता हुआ, सारी वीभत्सता को लांघता हुआ।...विष्णु ने कच्ची गीली मिट्टी को ईंटों के बॉक्स में भरते हुए रामदीन पासवान से इशारे से एक बीड़ी मांगी, लेकिन बीड़ी शायद उसके पास नहीं थी। इसलिए उसने मना कर दिया।

टटोलते हुए हाथ आखिरकार जूबों को खंगालने लगे, तो उसने एक बीड़ी जेब से निकालकर सुलगाई और धुंआ उगलने लगा। इन दिनों उसका बड़ी तेजी से काम कर रहा था। वो इस बात की फिराक में था कि कैसे वो सारे मजदूरों को लेकर अपने प्यारे गांव चला जाए। लेकिन क्या ऐसा हो सकता था? शायद यह बहुत मुश्किल था या नामुमकिन। अभी तो इस बात को सोच ही रहा था कि कम्पाउण्ड गेट के खुलने की आवाज आई।

सामने के कछावर शरीर वाला दिलावर खां काली शेरवानी पहले मूंछों को ऐंठते हुए नमूदार हुआ। दोनों सिपाही संगीनें चढ़ाए उसके साथ चले आ रहे थे। साथ में मुंशी भी था। आते ही दिलावर खान ने मुंशी को इशारा किया।

उसने रजिस्टर निकाला और नाम पुकारने लगा ''छोटू उरांव...रामदीन पासवान...विष्णु, पासवान...रमेश तुरी...सुरेश गंझू...संतोष पासी...सारे लोग हाजिर थे, लेकिन गायब था तो केवल चमरू महार।

चमरू महार का नाम आते-आते मुंशी को थोड़ी हिचकिचाहट हुई। लेकिन असावधानी वश वो चमरू महार का नाम बोल गया था। दिलावर खान ने उसे खा जाने वाली नजरों से घूरा, फिर दिलावर खां ने रजिस्टर में काम का ब्यौरा देखा ओर चला गया अपने लाव-लश्कर के साथ।

चमरू महार का नाम आते ही विष्णु का खून खौल कर रह गया था। लेकिन वो कर भी क्या सकता था। लेकिन वो कर भी क्या सकता था। नियति के हाथों वो मजबूर जो था। सारे मजदूर अपने-अपने काम में लग गए। लेकिन विष्णु का मन पता नहीं क्यों अपने काम में नहीं लग रहा था। उसने अपनी बुझी हुई बीड़ी को दुबारा सुलगाया और कश लेने लगा। उस धुंए के साथ उसका वजूद भी अनन्त में उड़ने लगा था।

चमरू महार उर्फ चमरूआ उन लोगों के साथ ही तो अपने गांव से बहला-फुसला कर स्थानीय ठेकेदार के लालच में पड़कर यहां इस कैदखाने में आकर कैद हो गया था। और साथ में वो भी तो था...वो यानी विष्णु। और विष्णु जैसे कितने ही प्रवासी मजदूर जिनके घरों में गांव में मजदूरी न मिलने के कारण दो वक्त चूल्हा नहीं जल पाता था और उनके बच्चे भूख से बिलबिलाते थे। नहीं तो कोई अपना घर अपना गांव, अपने लोग और अपनी धरती को भी भला छोड़ सकता है।

फिर धीरे-धीरे विष्णु की यादों का झुटपुटा साफ होने लगा था। उसे मुखिया दुर्जन सिंह की कहीं चौपाल में एक-एक बात याद आने लगी थी। दुर्जन सिंह बोल रहे थे ''अब गांव में कुच्छों नहीं रह गया है। तुम लोग आए दिन अखबारों में पढ़ते-सुनते रहते हो कि अब खेती किसानी में कुछ रह नहीं गया है। नहीं तो रोज-रोज अखबार में इतने किसानों की आत्महत्या की खबरें पढ़ने को काहे को मिलतीं। सरकार अनाज के दाम बढ़ा नहीं रही है। ऊपर से खाद-बीज का भाव भी आसमान छूने लगा है। पानी-बारिश का भी कुच्छो ठिकाना नहीं। हुआ-हुआ नहीं हुआ। अबे किसान क्या करे, महाजन से सूद-ब्याज पर पैसा न ले तो क्श करे। मर-मर के खेती करने का परिणाम क्या होता है। खेती करो लेकिन अनाज का दाम ठीक-ठीक नहीं मिलेगा। सरकार कहती है ''हम भारत को नए युग में ले जाएंगे। भारत देश डेवलप होगा।'' सोचिए, जरा आपलोग जहां खेती-किसानी का ई हाल है और इस देश में जहां सत्तर प्रतिशत लोगों का पेशा ही खेती है, तो किसान

आत्महत्या नहीं करेगा, तो क्या मिनिस्टर लोग आत्महत्या करेगा। इसीलिए हम कह रहे हैं कि जिन लोगों को भरपेट खाना और दू-वक्त की रोटी चाहिए, उनको हम काम दिलाएंगे। आप लोग हमारी फैक्टरी में काम कीजिए और आपके दाना-पानी का इंतजाम हम करेंगे।

तभी किसी ने सवाल उछाला ''हमें करना क्या होगा मालिक...?'' वो शायद रमेश तुरी था, जो गांव में दिहाड़ी पर काम करता था।

दुर्जन सिंह ने पैर फैलाते हुए कहा ''करना क्या होगा, कुछ नहीं, वहां हमारी ईंटों की कुछ भट्ठियां हैं, वहीं काम करना होगा।''

तभी कहीं से दूसरा सवाल उछला ''और मेहनताना कितना मिलेगा मालिक?'' ये शायद छोटू उरांव था।

दुर्जन सिंह ने जवाब दिया 'मेहनताना का क्या है छोटू...अब तुम लोग तो अपने आदमी हो...तुमसे क्या छिपाना। डेली सौ रुपये और सप्ताह में सात किलो चावल।''

तभी किसी ने तीसरा सवाल उछाला ''और हमारे रहने का ठिकाना कहां होगा?'' यह शायद संतोष पासी था।

दुर्जन सिंह ने खैनी को ठोंकते हुए कहा ''अरे जब खाने का इंतजाम हो गया, तो रहने का भी इंतजाम हो जाएगा।''

अब शायद सभी लोग आश्वस्त थे। तभी दुर्जन सिंह ने कहा ''आप लोग सोच-समझ लीजिए। जब आप लोग पक्का फैसला कर लें, तो हम से कहिएगा।''

...और उस छोटे से प्रखंड से जब सारे लोग चलने को तैयार हुए थे, तो क्या-क्या सपने संजोए थे पटना जाना है...सुना है पटना बहुत बड़ा शहर है. ..वहां जाकर गोलघर देखेंगे...नदी पर से जब ट्रेन चलेगी, तो नीचे देखने में बड़ा डर लगेगा और भी न जाने कितने-कितने सपने और बड़े-बड़े मनसूबे।

विष्णु जब घर से निकलने लगा था तो उसे मुनिया और सोनबतिया ने घेर लिया था। मुनिया कहने लगी ''बाबू जब घर आवोगे तो हमारे लिए का लावोगे?''

विष्णु यथावत् खड़ा उसे ताकता रहा था, फिर कांपते हुए स्वर में पूछा था ''बता तुझे क्या चाहिए?''

तब मुनिया अपनी तोतली जुबान में बताने लगी ''हमको न ऊ....

वाली गुलिया ला देना, जो धोने पर आंखें बद कर लेती है और...और मेरे लिए एक लाल फ्रॉक लाना...और...और ढेर सारी मिठाइयां भी।''

तब विष्णु ने उसके गाल को थपथपाते हुए कहा था ''हां बेटी ला देंगे। और बोल तुझे और क्या चाहिए?''

मुनिया फिर बोली ''और बाबू कुच्छो नहीं चाहिए। बस तुम जल्दी से चले आना।''

लेकिन सोनबतिया कुछ बोल कहां रही थी। वो तो केवल टुकुर-टुकुर ताक रही थी। मेमने के बच्चे की तरह। उसकी आंखें तो डबडबा आई थी। विष्णु ने एक बार सोनबतिया की पहाड़ी आंखों में झांकने की कोशिश की। फिर उसे लगा कि वो यूं ही नहीं इन पहाड़ी आंखों का दिवाना है। डबडबाई हुई आंखें कैसी झी-सी गहरी मालूम पड़ती थीं, कैसी झील-सी गहरी मालूम पड़ती थीं, जैसे कांची नदी के किनारे कोई केवट चांदनी रात में विरह का कोई गीत गा रहा हो, जिसमें असीम आनन्द की अनुभूति होती है।

गांव के चौपाल तक छोड़ने आई सोनबतिया बस इतना भर कर पायी थी ''मुझे कुछ नहीं चाहिए, बस तुम जल्दी आ...'' बाकी के शब्द तो उसके गले के भीतर ही घुट कर रह गए थे। तब विष्णु का मन कैसा तो होने लगा था। और कुछ आगे चलने पर वो भरभराकर रो ही तो पड़ा था। फिर जैसे अपने आपसे बोल पड़ा ''*मन को जीती तो जग जीत।* बड़े-बड़े ऋषियों ने सबसे कष्ट साध्य आश्रम गृहस्थाश्रम को ही तो बताया है। *मन को जीतो तब जानें।''*

पटना आने के बाद उसे असली बात पता चली थी। पटना शहर को जैसा अपनी स्मृतियों में उसने पाया था, वो वैसा ही था। न तो वहां गोलघर था, न ही पटना नदी का पुल और न ही कहीं आने-जाने की आजादी। रिहाइश से दूर यह एक किलेनुमा स्थान था। बस वाले कंडक्टर से उसने जाना था। कि वे लोग पटना में दानापुर जा रहे हैं। और उसके बाद वो लोग कैद थे उस कम्पाउण्ड में, जो एक किले की मानिंद था और जिसकी ऊंचाई बीस पच्चीस फुट थी। और जो रात के अंधेरे में किसी विशाल दैत्य की तरह दिखाई देता था।

फिर रोज का एक सिलसिला सा चल निकला था। सुबह होते सारे लोग

कम्पाउण्ड में बने तम्बुओं से बाहर निकलकर गुसल (शौच) वगैरह से फारिंग हो जाते। आठ बजे मिट्टियों से भरा बड़ी-बड़ी लारियां आतीं। लारियों पर से मिट्टी का ढेर उतारा जाता। फिर उसे गीला करके काठ के बक्से में भरा जाता और हजारों हजार ईंटे तैयार की जाती। ईंटों के ढेर को भरकर गंतव्य तक ले जाती।

इस बीच विष्णु ने अपने कई साथी मजदूरों से इस बात को कहते सुना था कि दुर्जन सिंह ऐसे ही जगह-जगह से मजदूरों को लाकर इन मट्ठियों के मालिकों को बेच जाता है और बदले में वो मोटी रकम ले जाता है। इस तरह पता नहीं वहां कितने विष्णु कैद होकर रह गए थे। विष्णु को जहां तक याद है, उसने जब से काम करना शुरू किया था, उसे खाने के अलावे नकद रुपए कभी नहीं दिए गए और न ही उसके साथियों को।

उसके सामने अचानक चमरू महार का चेहरा कौंध गया, जिसके जिस्म पर सैंकड़ों घावों के निशान थे। एक रात वो भागने की फिराक में था, लेकिन दिलावर खा के आदमियों ने उसे पकड़ लिया और इतना मारा, इतना मारा के वो अधमरा हो गया था। वो अपने आखिरी दिनों में बस यही कहता था ''मुझे घर जाने दो''...मेरी आखिरी इच्छा यही है कि मैं एक बार अपनी मां को देख लूं।'' लेकिन दिलावर खां ने उसकी बातों को नजरअंदाज कर दिया था। यहां तक कि उसकी लाश भी मरने की तीन दिन बाद जलाई गयी थी उफ्! ठंड के कारण लाश कैसी ऐंठ गई थी।

अब तो बस जिंदगी के कुछ साल ही बचे हैं। अब किसका, क्या कहां, कहीं कुछ होगा। इन दस सालों में तो बहुत कुछ बदल गया होगा। क्या मुनिया बड़ी नहीं हो गई होगी? क्या सोनबतिया मुझे देखने के बाद पहचान लेगी? पता नहीं कितने सारे सवाल विष्णु के दिमाग में रात की संगीनों के साए में कौंधते हैं, जहां बूटों की चरमराहट कभी बंद होती।

जाल

वह एक कंपकपाती हुई ठण्डी रात थी। पहले अगहन के महीने में आमतौर पर ऐसी ठण्डी रातें कोयलांचल में नहीं पड़ती थीं, लेकिन इस साल शुरूआती दिनों में ही ठण्ड ने अपना असर दिखाना शुरू कर दिया। कृष्ण पक्ष होने के कारण काफी अंधेरा था। ठण्ड के कारण हाथ जमने लगे थे। अंधेरा होने कारण कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर जीप रेंगती जा रही थी। जीप जब गांव के करीब पहुंची, तो पुलिस कप्तान ने हाथ के इशारे से ड्राइवर को गाड़ी के हेड लाइट बन्द करने को कहा। फिर गाड़ी के इंजन के बन्द होने की आवाज आयी। सबसे पहले गाड़ी से हवलदार सोहनलाल उतरा। उसके पीछे और दो-तीन पुलिस वाले उतरे। फिर इंस्पेक्टर आलोक कुमार ओर आखिर में पुलिस कप्तान वीरेन्द्र। नीचे उतरकर कप्तान वीरेन्द्र ने पूरे गांव का मुआयना किया। गांव में सब कुछ बिलकुल शान्त था। गांव में सोता पड़ गया था। रह-रह कर थोड़ी-थोड़ी देर में कुत्तों के भौंकने की आवाजें आ रही थीं।

पुलिस कप्तान वीरेन्द्र ने बहुत धीमे स्वर में इंस्पेक्टर से पूछा ''तुम्हें मंडन मिसिर का घर पता है ना?'' इंस्पेक्टर आलोक बोले ''हां-हां, अच्छी तरह पता है। हरिजन टोला है, बगल में ही है उसका घर, चलिए चलकर आपको दिखाता हूं।

रात की नीरवता चारों तरफ व्याप्त थी। ठण्ड लगातार बढ़ती जा रही थी। पुलिस कप्तान ने एक सिगरेट निकालकर चुलगाया और अपनी योजना इंस्पेक्टर आलोक, हवलदार सोहनलाल और बाकी अन्य पुलिस वालों को समझाने लगे। सबसे पहले तो इंस्पेक्टर आलोक से बोले ''तुम और सोहन लाल पीछे के हिस्से से अन्दर जाना, मैं और मोहन लाल आगे के हिस्से से दाखिल होंगे। ध्यान रखना कोई भी आदमी भागने न पाए। जरूरत पड़ने पर केवल हवाई फायर करना। गोली चलाने की जरूरत नहीं है। समझ गए।'' पुलिस कप्तान समझाने के लहजे में सभी पुलिसकर्मियों से बोले।

सभी पुलिसकर्मी एक स्वर में बोले ''यर रस!'' फिर पुलिस कप्तान एक बार फिर समझाते हुए बोले ''और सुनों, जब तक उधर से कोई गोली नहीं चलाए, तब तक तुमलोग भी उन पर फायर मत करना। ठीक है?''

फिर सभी पुलिसकर्मी एक स्वर में बोले ''यस सर!'' जब वे लोग मण्डन मिसिर के घर पहुंचे, तो ठण्ड और भी बढ़ गई थीं

पुलिस कप्तान ने दरवाजा खटखटाया। लेकिन कोई जवाब नहीं मिला। काफी देर तक दरवाजा खटखटाने के बाद दरवाजा खुला। सामने मण्डन मिसिर खड़ा था। पुलिस को देखकर उसने दरवाजा बन्द करना चाहा। लेकिन पुलिस कप्तान दरवाजे को ठेलते हुए अन्दर आ गए। साथ में सारे पुलिस वाले भी अन्दर आ गए।

कमरे में घुसते ही पुलिस कप्तान ने कमरे का मुआयना किया। फिर उन्होंने मण्डन मिसिर को गौर से देखते हुए उसके चेहरे को भी पढ़ा। मण्डन मिसिर का चेहरा सफेद पड़ गया था। उसके मुंह में जैसे आवाज ही नहीं थी। पुलिस कप्तान ने मण्डन मिसिर को लगभग डांटते हुए पूछा ''सूद-ब्याज का धंधा कब से करते हो?''

मंडन मिसिर बहुत मुश्किल से बोल पाया ''मैं सूद-ब्याज का धंधा कहां करता हूं सर।''

पुनः हड़बड़ाते हुए उसने पुलिस कप्तान से बोला ''आप...आप खड़े क्यों हैं सर। बैठिए ना सर...।'' पुलिस कप्तान खीज कर बोले ''नहीं मैं ठीक हूँ।'' फिर कप्तान ने इंस्पेक्टर और हवलदार को आदेश दिया ''पूरे कमरे की तलाशी लो...।''

पुलिस इंस्पेक्टर और हवलदार दोनों हरकत में आ गए। बहुत ठण्ड पड़ने

के बावजूद उन लोगों के शरीर में बला की फूर्ति दिखाई देने लगी थी। दस मिनट के बाद पुलिस वालों ने मंडल मिसिर के घर से अलग-अलग नामों के खाता धारकों के बैंक खाते, अलग-अलग बैकों के खाते, रेवेन्यू स्टैम्प, ब्लैक स्टैम्प, मैरिज लोन, पर्सनल लोन, हाऊसिंग लोन के पेपर इत्यादि बरामद कर लिये थे। इतने सारे सबूत मंडन मिसिर की गिरफ्तारी के लिए काफी थ।

सुबह होते ही गांव में यह खबर जंगल में लगी आग की तरह चारों तरफ फैल गयी कि मंडन मिसिर को पुलिस पकड़कर ले गयी। सभी लोगों के मुंह से एक ही बात निकल रही थी ‘‘मंडन मिसिर गिरफ्तार हो गया है...मंडन मिसिर गिरफ्तार हो गया है।

मंडन मिरिस गांव का एक दबंग किस्म का आदमी था। उसके पास शुरूआत में कोई पूंजी नहीं थी। बिलकुल नंगा आदमी था मंडल मिसिर। लेकिन पिछले कुछ ही वर्षों में उसने अकूत चल-अचल सम्पत्ति जमा कर ली थी। पूरे गांव में उसका रौब चलता था। उसका काम था धीरे-धीरे मजदूरों को अपने सूदखोरी के जाल में फांसना। सी.सी.एल. के मजदूरों को अच्छीखासी तनख्वाह मिलती है। हर मजदूर इतना कमा लेता है कि अपना जीवन-यापन आसानी से कर ले। महीने में बीस-पच्चीस हजार तनख्वाह मिलती है। साल में दशहरा-दिवाली में बोनस तीस-चालीस हजार रुपये मिलता है। लेकिन इन मजदूरों की अपनी मकमजोरियां भी है। महीने में बीस-पच्चीस हजार रुपये तनख्वाह इनके खाते में आ जाती है। लेकिन इनके पास महीने के पन्द्रह तारीख तक अपने खाते में पचास रुपया भी बैलेंस नहीं बचता है।

पहली बुरी आदत नहीं काहिलियत होती है। महीने में बीस दिन काम करते हैं दस दिन छुटठी मारते हैं। इसके कारण इनके खाते में आधे महीने की तनख्वाह लगभग दस-बारह हजार रुपये ही आ पाती है। दूसरे ये खाने-पीने के शौकीन होते हैं। इन्हें खाने-पीने के लिए मीट-मछली वालों के यहां से उधार ही लेना पड़ता है। मीट-मछली वाले चार सौ रुपये की चीज इन सीधे-साधे मजदूररों को आठ सौ रुपये में बेचते हैं। बेचारे मजदूरों को पैसा खच्र कर देने के बाद मजबूरी में इनसे उधार लेना पड़ता है। जिसका ये लोग खूब फायदा उठाते हैं।

कपड़े वालों के यहां जब ये लोग कपड़ा खरीदने जाते हैं, तब दुकानदार

पुराने माल को ही इन मजदूरों को दिखाते है। इसका एक कारण यह है कि इन मजदूरों का इन दुकानों में उधार चलता है। इसका फायदा उठाते हुए दुकानदार इनको अपना पुराना माल ही बेचते हैं। उस पर भी दो हजार की साड़ी इन्हें दोगुने दाम पर बेची जाती है।

राशन वाले भी इन मजदूरों को जमकर उधारी खिलाते है। जितने का उधार चाहो ले जाओ। कोई रोट-टोक नहीं। उन्हें पता होता है कि महीने-दो महीने में उनका हिसाब क्लियर हो जाना है। पांच हजार का राशन लेने वाले मजदूरों को हिसाब-किताब देखना कहां आता है। मजदूर बेचारे पढ़े-लिखे तो होते नहीं। इनका फायदा उठाओ। और मंडल मिसिर ने इन सीधे-साधे मजदूरों का यही फायदा उठाना शुरू कर दिया था। उसका काम था सुबह-सुबह उठना। दिशा-फरागित और स्नाह-ध्यान से निवृत होकर अपनी मोटर-साइकिल पर सवार होना और फिर किसी अफसर की तरह बैंक पहुंच जाना। बैंक पहुंचने के बाद वो अपनी टोही नजरों से अपने शिकार को ढूंढ़ने का प्रयास करता था। फिर वो उनसे मीठी-मीठी बातें करता, उन्हें चाय-वाय पिलाता, उनसे लगातार कुछ दिनों तक घुलता-मिलता और फिर वो अपने शिकार को कर्ज देने की पेशकश करता। वो उन मजदूरों को चुनता, जिनको अपनी लड़की की शादी करनी होती। इनके अलावे वो बैंक के चपरासी से लेकर कैशियर तक को सेट कर लेता था। चपरासी, क्लर्क यहां तक कि मैनेजर तक को वो सेटिंग कर लेता था।

मंडल मिसिर को सेटिंग करने में महारथ हासिल थी और अपनी इसी सेटिंग करने की कला के कारण उसने ढेरों रुपये कमाया था और व्यवहारकुशल व्यक्ति बना हुआ था। अगर आपके पास पैसा नहीं है और आपको घर बनाना है, तो आपको बैंक मैनेजर से मिलने की जरूरत नहीं है। आप मंडल मिसिर से मिल लीजिए आपका काम हो जाएगा। दस लाख का आपको लोन मैनेजर सीधे-सीधे पास नहीं कर सकता, क्योंकि मैनेजर की अपनी जिम्मेवारियां है। फिर बैंक की अपनी औपचारिकताएं हैं। मंडल मिसिर से मिल लीजिए, दस परसेन्ट कमीशन लगेगा, आपका लोन फाइनेंस हो जायगा। अगर बैंक से लोन नहीं चाहते तो कोई बात नहीं, आपको बिना किसी लिखा-पढ़ी के मंडल मिसिर से कर्ज मिल सकता है। बशर्ते आप सी.सी.एल. वर्कर हो। आपको जितना कर्ज चाहिए मंडल मिसिर से ले लीजिए। बदले में वो

आपका पासबुक जिसमें आपका वेतन आता है, वो अपने पास रख लेगा और हर महीने आपको बैंक बुलाकर आपसे अपनी ब्याज की रकम खाते से निकलवा लेगा।

मंडल मिसिर सारे आर्थिक दांवपेज जानता था। ठीक यही काम वो मैरिज लोन में करता था। यदि आप लोन लेना चाहते हैं, तो वो आपको सम्बन्धित बैंक से लोन दिलवा देता था। बदले में दस परसेन्ट कमीशन ले लेता था। यदि आप लोन नहीं लेना चाहते हैं, तो कोई बात नहीं, वो आपको कर्ज भी दे देगा। लेकिन बदले में वो आपका सैलरी वाला पासबुक रख लेगा। छोटी-छोटी जरूरतों के लिये जैसे पांच-दस हजार रुपये के लिये भी आपको कहीं जाने की जरूरत नहीं है। बस आप मंडल मिसिर से सम्पर्क कर लीजिए। ज्यादा नहीं महीने में आपको सिर्फ दस परसेन्ट ब्याज देना होगा और इस तरह वो अपने नीति-अनीति, छलकपट के जरिये ढेर सारा रुपया बनाता जहा रहा था।

सुबह गांव में जैसे ही यह खबर पहुंची कि पुलिस मंडल मिसिर को पकड़कर थाने ले गयी है। थाने के पास गांव वालों की भीड़ जमा हो गयी थी। सामने कुर्सी पर मंडल मिसिर बैठा हुआ था। उसके सामने वाली कुर्सी पर पुलिस कप्तान बैठे हुए थे। काफी देर तक मंडल मिसिर को घूरते रहने के बाद उन्होंने हवलदार सोहनलाल से कहा ‘‘सोहनलाल चमरु पासवान को बुलाकर लाओ।’’

थोड़ी देर में चमरु थाने में हाजिर हुआ।

पुलिस कप्तान चमरु से मुखातिब हुए ‘‘चमरु पासवान तुम्हारा ही नाम है?’’

चमरु डरते हुए बोला ‘‘जी हां सरकार, मेरा ही नाम चमरु पासवान है।’’

पुलिस कप्तान ने बैंक के खाते के दिखाते हुए पूछा ‘‘तुमने ये खाता मंडल मिसिर को क्यों दिया था?’’

चमरु फिर डरते हुए बोला ‘‘कर्जा लिया था न सरकार, इसलिए यह खाता मंडल मिसिर ने मुझसे ले लिया था।’’

पुलिस कप्तान ने उससे पूछा ‘‘कितना कर्जा लिया था तुमने मंडल

मिसिर से?’’

चमरु पासवान ‘‘सर पचास हजार रुपये कर्ज लिये थे मंडल मिसिर से।’’

पुलिस कप्तान चमरु से ‘‘कितना ब्याज देते हो पचास हजार रुपये का?’’

चमरु फिर सहमे हुए लहजे में बोला ‘‘सर पांच हजार रुपये महीना ब्याज देते हैं।’’

पुलिस कप्तान आश्चर्य से ‘‘यानी दस परसेन्ट तुम केवल ब्याज देते हो!’’

चमरु फिर उसी भाव से बोला ‘‘हां सर, दस परसेन्ट ही रेट है।’’

पुसिल कप्तान चमरु से ‘‘दस परसेन्ट रेट है मतलब?’’

चमरु फिर सहमे हुए भाव से ‘‘बैंक से कर्जा सर बिना किसी गारेन्टर के मिलता नहीं है। इसीलिए हमलोग मंडल मिसिर से दस परसेन्ट पर कर्जा लेते हैं।’’

पुलिस कप्तान का चमरु से फिर प्रश्न ‘‘कितने दिन पहले कर्जा लिया था तुमने?’’

चमरु के लहजे में कोई बदलाव नहीं, बोला ‘‘सर दो साल पहले।’’

पुंलिस कप्तान चमरु से थोड़ा रुखे स्वर में ‘‘कर्जा क्यों लिया था, दारू पीने के लिये?’’

चमरु डर से हकलाते हुए ‘‘नहीं सर, अपनी बीबी के इलाज के लिये कर्ज लिये थे।’’

चमरु पासवान को पुलिस कप्तान समझाते हुए बोले ‘‘देखो चमरु तुम लोग बीबी और बाल-बच्चे वाले आदमी हो। अगर दारू पीते हो तो पीना छोड़ दो। इससे तुम लोगों का घर बरबाद हो रहा हैं लो यह पासबुक और अपने घर जाओ। आज से तुम्हारा सारा ब्याज और मूलधन खत्म हो गया। हां, अब दुबारा किसी से कर्ज मत लेना।

चमरु पासवान खुशी-खुशी पासबुक लेकर चला गया। फिर पुलिस कप्तान मंडल मिसिर बोले मंडल मिसिर तुमको शर्म नहीं आती। तुम चमरु जैसे गरीब मजदूरों का शाोषण करते हो। बेचारे को कहीं से कर्ज नहीं मिल सकता, तो उकसा फायदा ही उठाते हो। चमरु से तुमने दो साल में कितना

ब्याज लिया। हिसाब जोड़ते हुए लगभग एक लाख बीस हजार रुपये और फिर भी ब्याज लेने जा रहे हो। बहुत ही गिरे हुए आपमी हो तुम छीः मुझे घिन आती है।

फिर पुलिस कप्तान इंस्पेक्टर से मुखातिब हुए "सुनो आलोक, मंडल मिसिर के उत्तर मंडल मिसिर के ऊपर जितनी ज्यादा-से-ज्यादा धाराएं हो, सब लगा दो और अभी जितने लोग ब्याज देते हैं, उनका बयान लो और मंडल मिसिर के ऊपर एफ.आई.आर दर्ज करो।"

फिर पुलिस कप्तान हलवदार सोहनलाल से बोले "सुनीता किस्कू को बुलाओ।"

थोड़ी देर बाद सुनीता किस्कू थाने में हाजिर हुई। पुलिस कप्तान ने सुनीता किस्कू को बड़े गौर से देखा। कुछ देर तक देखने के बाद उन्होंने सुनीता से पूछा "सुनीता किस्कू तुम्हारा ही नाम है?"

सुनीता किस्कू ने लाचारगी के साथ अपना सिर हिलाया "जी सर, मेररा ही नाम सुनीता किस्कू है।"

पुलिस कप्तान ने बैंक का पासबुक सुनीता को दिखाते हुए पूछा "यह पासबुक तुमने मंडल मिसिर को क्यों दिया है? ये पासबुक तो तुम्हारा है। तुम्हारे पास होना चाहिए।"

पुलिस कप्तान के अचानक सवाल करने से सुनीता डरकर रोने लगी और रोते हए भर्राये गले से बोली "सर मेरे बच्चे का एडमिशन करवाना था, इसीलिए मंडल मिसिर से कर्ज लिया था। कर्ज लेने के एवज में मंडल मिसिर ने मेरा पासबुक गिरवी रख लिया था।"

पुलिस कप्तान ने सुनीता से फिर पूछा "अच्छा बताओ तुम्हारे पति क्या करते हैं?"

इस सवाल पर सुनीता और जोर-जोर से रोने लगी और रोते हुए बोली "सर तीन साल पहले मेरे पति खान दुर्घटना में काम करते हुए मर गए थे।"

पुलिस कप्तान को सुनीता किस्कू से और सवाल पूछने की हिम्मत नहीं हुई। उन्होंने सुनीता किस्कू को समझाया "देखो सुनीता, तुम्हारे पति के मर जाने का मुझे बेहद दुःख है। मैं तुम्हारे लिये अगर भविष्य में कभी कुछ कर सका, तो मुझे बहुत ही हार्दिक खुशी होगी। लो यह अपना पासबुक रखो

और भूलकर भी अब कभी कर्ज मन लेना। जाओ आज से तुम्हें ब्याज देने की कभी जरूरत नहीं पड़ेगी।

सुनीता किस्कू की आंखें खुशी से भर आयी। वो पुलिस कप्तान के प्रति कृतज्ञता जाहिर करती हुई चली गयी। उसके चले जाने के बाद पुलिस कप्तान फिर एक बार मंडल मिसिर से मुखातिब हुए "मंडल मिसिर तुम्हारे जैसा घटिया और बेहूदा किस्म के इनसान से आज तक मेरा पाला नहीं पड़ा था। डायन से भी गए गुजरे हो। तुम्हें इनसान कहना गलत होगा। तुम इस पृथ्वी पर शैतान का साक्षात रूप हो। एक ओर जिसका पति इस दुनिया में नहीं है, उसके दो छोटे-छोटे बच्चे हैं, उस औरत पर उन दोनों बच्चों के पालन-पोषण की जिम्मेवारी है, तुमने उस औरत से भी ब्याज वसूलने में कोई कसर नहीं छोड़ी। बहुत ही घटिया किस्म के आदमी हो तुम।"

फिर पुलिस कप्तान ने हवलदार सोहनलाल को पुकारा। सोहनलाल हाजिर हुआ।

पुलिस कप्तान सोहनलाल से बोले "रामदयाल मुंडा को बुलाओ।"

थोड़ी देर बाद रामदयाल मुंडा थाने में हाजिर हुआ। रामदयान मुंडा की उम्र कोई चालीस-बयालीस साल की होगी। अभी उसके गोल्डेन देने की कोई उम्र नहीं थी। लेकिन रामदयाल मुंडा को गोल्डेन देने पड़ा था मंडल मिसिर के दबाव में।

पुलिस कप्तान थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद रामदयाल मुंडा से मुखातिब हुए "सुना है तुमने गोल्डेन दिया नहीं है, बल्कि दिलवाया गया है। किसने दिलवाया है गोल्डेन?"

रामदयाल मुंडा बेचारगी भरे लहजे में बोला "किसी ने नहीं, मेरी तकदीर ने गोल्डेन दिलवाया है।"

पुलिस कप्तान ने फिर पूछा "लेकिन मुझे तो पता चला है कि तुमने बहुत सारा कर्ज ले रखा था, इसलिए तुम्हें गोल्डेन देना पड़ा।"

रामदयाल मुंडा गहरी निःश्वास छोड़ते हुए बोला "अब छोड़िए भी साहब क्या कीजिएगा जानकर, मेरी जमीन को मेरे पट्टेदार ने दबा लिया था। सो कोर्ट-कचहरी का चक्कर लगाना पड़ा। सोचा था कर्ज लेकर जमीन को बचाऊंगा, लेकिन न तो जमीन बच सकी और न ही नौकरी। इधर बीच में मेरी बीबी की तबियत ज्यादा खराब रहने लगी। उसके दवा-दारू में अलग

से रुपये खर्च करने पड़ रहे थे। फिर कर्ज का बोझ भी लगातार बढ़ रहा था। इधर मंडल मिसिर भी मेरी कमजोरी को ताड़ गया था। कर्ज जब ज्यादा चढ़ गया, तो मंडल मिसिर की सलाह पर मैंने गोल्डेन मार दिया।''

पुलिस कप्तान रामदयाल मुंडा की बात बड़ी गम्भीरता से सुन रहे थे। लेकिन रामदयाल मुंडा अपनी बात खत्म कर चुका था। दोपहर का सूरज अब तेजी से ढलने लगा था। धीरे-धीरे शाम हुई, तब पुलिस कप्तान इंस्पेक्टर आलोक से बोले ''मंडल मिसिर का चालान कर दो।''

जीप में बैठते हुए पुलिस कप्तान सोच रहे थे कि शोषण के भी कैसे-कैसे दुष्चक्र हैं। जीप अंधेरे में रेंगती हुई धीरे-धीरे आगे बढ़ गई।

कफन

चारपाई को घेरकर सारे लोग खड़े थे। चरकु रविदास की औरत मुसमातीन, उसका लड़का झींगुर, दोनों बेटियां चम्पा व सोनी और मातमपुर्सी के लिए आए हुए तमाम टोले मोहल्ले के लोग, रोना बिलखना जारी था। दोपहर के बाद का वक्त था। सारे लोग झींगुर की मां मुसमातीन और झींगुर को ढांढस बंधा रहे थे कि होनी को कौन टाल सकता हैं परमात्मा जिन्हें अपने पास बुला ले, उसे तो जाना ही पड़ता है। यह सारा संसार निस्सार है। सब माया का खेल है।

सामने पड़ा शव को देखकर मुसमातीन का कलेजा फटा जा रहा था। अभी कल ही की तो बात है, कह रहे थे कि लड़कों का कपड़ा बन गया है, उसे लाना होगा। मिठाइयां मेले से चलकर खरीद ली जाएगी। चम्पा और सोनी को इस बार तनख्वाह मिलने पर नई-नई दो घड़ियां लाकर दूंगा। लेकिन हत्भाग्य! ऐन नवमी के दिन चरकु रविदास का देहावसान हो गया। अब शाम उतरने को हो आई थी। भोला पासवान ने झींगुर से भर्रायी हुअ आवाज में कहा ''भइया अब देर करने से क्या फायदा है। चलो चलके इनका कफन दफन का इंतजार किया जाए।'' यह सुनकर झींगुर की मां मुसमातीन और जोर-जोर से रोने-चिल्लाने लगी। पूछने पर मालूम हुआ कि वो आखिर अब किस बात के लिए रो रही है। मरने के बाद आदमी का क्रिया-कर्म तो करना ही पड़ता है। भर्राये हुए गले से वह बोली ''घर में तो

एक धेला भी नहीं है। आखिर इनका क्रिया-कर्म कैसे होगा।'' आस-पड़ोस के लोगों को यह सुनकर धक्का लगा। कोई भी अपनी जेब ढीला करने को राजी नहीं हुआ। सब जानते थे कि आजकल पर्व-त्योहार का समय है। कब, किसको, कहां, कितने रुपयों की जरूरत पड़-जाए, कौन जानता है।

समस्या वही थी कि अब चरकु रविदास का अंतिम संस्कार कैसे किया जाए। जब लोगों को कोई उपाय न दिखा, तो एक-एक कर सारे लोग जाने लगे। अब चारपाई के पास चन्द पड़ोसियों को छोड़ और कोई न था। आखिर भोला पासवास ने फिर पहल करते हुए कहा ''भौजी घर में कुछ कपड़े-गहने हों, तो उसे रेहन रख आओ। कम-से-कम भैया का अंतिम संस्कार तो करना ही पड़ेगा। नहीं तो कब तक इन्हें यहां ऐसे ही रखेंगे।''

मुसमातीन ने रूंधे हुए गले से कहा ''भैया इनकी बीमारी में मैंने एक-एक समान गिरवी रख दी थी। घर में चन्द दानों के अलावा और कुछ नहीं है।'' इतना कहकर तो वो फिर जोर-जोर से रोने लगी।

समस्या सचमुच बड़ी विकट थी, अब आखिरकार चरकु रविदास का अंतिम संस्कार कैसे किया जाए। भोला पासवान भी सोचने की मुद्रा में वहीं जमीन पर उकडूं बैठ गए। अचानक उन्हें याद आया कि अभी तो पर्व-त्योहार का समय है। लोग दशहरे में मेला घूमने के लिए तो आते ही है, क्यों न इस शब को उठाकर मेले में ले जाया जाए। कुछ लोगों का दिल अगर पिघल गया, तो कम-से-कम कफन-दफन का इंतजाम तो हो ही जाएगा। हालांकि उन्हें यह बात कहते संकोच हो रहा था, लेकिन हिम्मत जुटाकर उन्होंने यह बात कह ही डाली ''भौजी मेरे हाथ तो सचमुच तंग है। नहीं तो मैं दिल से चाहता हूं कि भैया का अंतिम संस्कार ठीक-ठाक से पूरा हो। मैं टोले-मोहल्ले के लोगों जैसा नहीं हूं कि गांठ में रुपये बांधकर रखूं और अपने मित्र-हितैषी की मरनी-हरनी में मदद न करूं। मेरे मन में एक तजवीज है। आपलोग कहें तो मैं बताऊं।''

मुसमातीन और झींगुर ने प्रश्नसूचक दृष्टि से भोला पासवान की ओर देखा। तब भोला पासवान सकुचाते हुए बोले ''भौजी कहने को तो ठीक नहीं लग रहा हैं, लेकिन क्या किया जाए और कोई उपाय भी तो नहीं है। यह कहकर उन्होंने अपनी तजवीज बताई।''

थोड़ी देर तक मुसमातीन और झींगुर टकटकी लगाए शव को घूरते रहे।

फिर झींगुर अचानक उठ खड़ा हुआ। पड़ोस के घर लोगों की मदद से शव को चारपाई समेत मेले में ले जाने का बंदोबस्त हुआ।

झींगुर मेले में एक किनारे चारपाई पर रखे अपने पिता के शव के पास उकडूं बैठ गया। हालांकि इस तरह उसे काफी क्षोभ और आत्मगलानि महसूस हो रही थी, लेकिन किया भी क्या जा सकता था। झींगुर अपने आत्मसम्मान को ताक पर रखकर उकडूं बैठा हुआ था। राहगीर आ रहे थे, जा रहे थे, लेकिन कोई भी उस शव में दिलचस्पी नहीं दिखा रहा था। एक घंटा बीता, दो घंटा बीता, लेकिन कोई भी शव के पास तक नहीं फटका। सामने पड़ी चरकु रविदास की शव पर मक्खियां भिनभिना रही थी, जिन्हें झींगुर गमछे से बार-बार हांक रहा था। अब लोगों ने कोई तब्बजों नहीं दी, तो झींगुर ने एक तख्ती चारपाई के किनारे लिखकर लटका दिया ''कृपया इस शव के अंतिम संस्कार के लिए दान करें और परमार्थ के भागी बनें।''

फिर एक घंटा बीता, दो घंटा बीता, लेकिन हाल ज्यों-का-त्यों ही बना रहा। अब धुंधलका धीरे-धीरे गहराने लगा था और पंडाल में आवागमन भी तेज हो गया था, लेकिन शव पर किसी की नजर नहीं पड़ रही थी। झींगुर का आत्मविश्वास डिगने लगा था, उसका धीरज जवाब देने लगा था। उसे लग रहा था कि लोग कितने संवेदनहीन हो चले हैं। किसी को किसी के सुख-दुख से मतलब नहीं है। कुछ देर सोचने के बाद उसने चारपाई को लाश समेत उठाकर पंडाल के केन्द्र में रख दिया। जहां लोग धीरे-धीरे जमा होने लगे थे।

भीड़ ने थोड़ी बहुत शिरकत करनी शुरू कर दी थी। लोग आते, तख्ती को पढ़ते और आगे बढ़ जाते। तभी वहां दो युवक आकर रूके। दिखने मेंवे पढ़े-लिखे और संपन्न घरों के लग रहे थे। पहले युवक ने पास आकर लाश के ऊपर टंगी तख्ती को पढ़ा और उसने अपने मित्र को दिखाया। दूसरा युवक तख्ती पर लिखी इबारत को देखकर फिस्स से हंस पड़ा। उसने पहले युवक से कहा ''आजकल यह नया बिजनस शुरू हो गया है। किसी श्मशान घाट से लाश को उठाकर लाया होगा और हमलोग को बेवकूफ बना रहा है।'' पहले युवक ने झींगुर को धमकाया ''क्यों बे! यह नया धंधा कब से चालू किया है। स्साले, लोगों को ठगने के लिए और कोई काम नहीं

मिला।''

इस पर झींगुर ने प्रतिवाद किया ''मजाक क्यों उड़ाते हैं साहब, ये मेरे पिताजी का शव है। आपलोग किसी गरीब की मजबूरी को क्यों नहीं समझते। कोई शौक से थोड़े ही किसी शब को उठाकर यहां पंडाल में रखेगा। आप लोगों को शर्म आनी चाहिए, आपलोग मजाक बना रहे हैं। कुछ नहीं दे सकते तो न सकी, लेकिन किसी गरीबी का मजाक तो मत उडाइये'' इतना कहकर वह जोर-जोर से रोने लगा। दोनों युवक जिधर से आए थे, उधर ही चले गए।

झींगुर अभी अपने आस्तीन से आंसुओं को पोछ ही रहा था कि सामने से उसे अपने पिता जी के दफ्तर में काम करने वाले क्लर्क शर्मा जी परिवार समेत गुजरते हुए दिखे। झींगुर ने उम्मीद के सिरे को दुबारा थामते हुए सोचा। क्यों न यह बात शर्मा जी को बताई जाए। यह सोचकर वह शर्मा जी की तरफ लपका। उन्हें सारी बात तफसील से बताई। अब शर्मा जी सोच में पड़ गए। महीने के अंतिम दिन चल रहे थे। नौकरी पेशा लोगों के लिए तो एक महीने में चार दिन ही दिवाली होती है। उन्होंने झींगुर को दिलासा देते हुए कहा ''बेटा, मैं तुम्हारी मदद जरूर करता, लेकिन पर्व-त्योहार के कारण और महीने के आखिर में मैं भला तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूं। अभी यही से ले-देकर काम चलाओ।'' इतना कहकर वो आगे बढ़ गए।

झींगुर को एकबारगी ऐसा लगा जैसे वो इस मेले की भीड़ में अपने पिता के शव के अंतिम संस्कार के लिए चिल्ला-चिल्ला कर मदद मांग रहा हो, लेकिन लोगों को उसकी बात सुनाई ही नहीं दे रही। रह-रहकर उन युवकों की बातें उसके कलेजे को चाक कर रही थी ''स्साले फुटानीबाज, फैशनपरस्त, बाप के पैसों पर ऐश करने वाले!'' इन्हें तो असली भूखे-नंगे लोग भी पेट के लिए एक्टिंग करते दिखाई देते होंगे। झींगुर को अफसोस हो रहा था कि वो बेकार ही मेले में आया। उसे शर्मा जी पर भी क्रोध आ रहा था कि वो निहायत ही एहसान-फरामोश आदमी निकले। कहां ज्यादा दिन हुए जब इनकी मां को लकवा मार गया था तो उसके पिताजी को कितने चिरौरी-मिन्नत करके यही शर्मा जी अपने घर ले गए थे अपनी माताजी की टट्टी-पैखाना साफ करवाने के लिए। एक महीना तक लगातार उसके पिताजी शर्मा जी के

घर पर ही रहे थे उनकी मां की सेवा-सुश्रुषा के लिए। बुढ़िया मरते-मरते उन्हें आशीष देते गई थी। ऐसा बताते रहे थे झींगुर के पिता चरकु रविदास।

पास ही दान-पेटी पर लिखी इबारत पर अचानक झींगुर की नजर चली गई, जहां लिखा ''दान से बड़ा कोई परमार्थ नहीं है। कृपया दान देकर पूजा समिति को सहयोग करे।

उसने देखा लोग दान देने के लिए एक दूसरे पर चढ़े जा रहे थे। लोगों के पास जो भी रुपये, दो रुपये चार रुपये है, उन्हें लोग दान-पेटी में डाल रहे है। इधर चरकु रविदास के कंकालनुमा शव के मुंह पर मक्खियां भिनभिना रही है। झींगुर को लोगों की सोच और समाज की संवेदनहीनता पर अफसोस हो रहा था। वो सोच रहा था कि जिस देश में धर्म के नाम पर लाखों रुपये चढ़ावे और झूठी शान में खर्च किए जा रहे हों, उस देश और उस देश के लोगों से और क्या उम्मीद की जा सकती है। अचानक झींगुर को पता नहीं क्या सूझा, वो अपने पिता की शव के टटोलने लगा। शव बर्फ की मानिंद जग गया था, उसके भीतर कुछ परका, वो उझा और संकोच को त्याग कर उसने गमछे को कटोरे का शक्ल दिया और लोगों के सामने जा जाकर अपने बाप के शव के कफन के लिए गुजारिश करने लगा। कोई दुत्कार कर कहता ''इतने हट्टे-कट्टे हो, जाकर कोई काम क्यों नहीं करते।'' कोई यह कहकर टाल देता ''भैया छुट्टे नहीं है।'' और कोई बिना कुछ कहे ''आगे जाओ'' की हांक लगा देता।

सुबह-सुबह उसकी आंखें खुलीं और बेहोशी छंटी तो मेले में थोड़ी बहुत आमद-रफ्त शुरू हो चुकी थी। चीजों के मोल-भाव और खरीद-बिक्री के हो-हल्ले के कारण उसे लगा कि कहीं वो कोई सपना तो नहीं देख रहा। लेकिन यह सपना नहीं देख रहा। लेकिन यह सपना नहीं था। वह सचमुच मेले में ही था और उससे थोड़ी दूरी पर चरकु रविदास का शव ज्यो-का-त्यों चारपाई पर अकड़ा हुआ पड़ा था। तभी झींगुर को अपनी और पूजा समिति का कोई सदस्य आता हुआ दिखा। आते ही उसने बड़े रौब से मुंह पर रुमाल रखते हुए पूछा ''क्यों जी, यह क्या मामला है? यह लाश किसकी है, और इसे यहां क्यों रखा गया है? देखते नहीं कितनी बदबू फैल रही है। इसे फौरन यहां से हटाओं।''

इस पर झींगुर ने जोर-जोर से रोते हुए सारी तफसीलात बताई। पूजा समिति के उन सदस्य ने झींगुर को आश्वासन दिया और उससे कहा "रोने से काम नहीं चलेगा। हमलोग लाश को हटवाने का इंतेजाम कर रहे है।" थोड़ी-देर बाद उस आदमी के साथ दो-तीन आदमी ओर आए। पंडाल से थोड़ी दूरी पर सड़क के किनारे म्यूनिसिपैलिटी की जीप खड़ी थी। दो लोग उसमें से उतरे। शव को स्ट्रेचर पर लादा गया, गाड़ी स्टार्ट हुई और झींगुर उस गाड़ी को आंखों से ओझल होते हुए सड़क पर पता नहीं कब तक घूरता रहा।

खाली सड़क की तरह उसका हृदय भी भांय-भांय कर रहा था। आंसू थे कि थमने का नाम ही नहीं ले रहे थे। कातर नेत्रों से पता नहीं वह कब तक खाली सड़क को घूरता रहा।

गिरफ्त

अबकी बाबू साहेब कुछ जोर से चिल्लाए "कहां मर गये बुधुआ मादर...कब से बुला रहे हैं बहन...सुनता काहे नहीं रे...।"

बुधुआ जिसकी उम्र बारह-तेरह साल की थी। शरीर सूखे हुए पतले बांस की तरह। गहरे काले पड़ गए गड्ढों में धंसी हुई आंखें, सूखी हुई पसलियां, पापडियाएं हुए होंठ, जिसे वो बार-बार जीभ से चाटता रहता, जिससे उसके होठों पर गर्द की एक मोटी परत जग गई थी। एक मैले-कुचैले हॉफ-पैन्ट और तार-तार हो चुकी बनियान में हाथ-बांधे सिर झुकाएं आकर खड़ा हो गया।

गोया वो आदमी का बच्चा नहीं कोई रोबोट हो, जिसके पुर्जे ढीले हो चुके हों। बुधुआ को सामने पाकर एक बार फिर दहाड़ उठे बाबू साहेब "आएं रे स्साला! तुमको हम कितना देरी से बुला रहे हैं। सुनता काहे नहीं था रे. ..कान में ठेपी लगाइले था का...?" "न...न...नहीं मालिक! भूसाघर से भूसा निकाल रहे थे मालिक का गुस्सा देखकर थर-थर कांपते हुए बुधुआ घिघियाते हुए बोला। मानो उसकी आवाज को कोई भीतर से धकेल रहा हो।

तभी बाबू साहेब की नजर उसके मुंह पर गई, जहां किसी चीज की जूठन लगी थी। फिर दहाड़ते हुए बोले "आएं रे स्साला! अभी क्या खा रहा था तू रे? झूट्ठे बोल रहा था कि भूसा निकाल रहे थे। सच-सच बता नहीं

तो आज तेरी चमड़ी उधेड़ दूंगा।

सामने ही बबुआइन मोढे पर बैठकर चावल चुन रही थी। बुधुआ की खाने वाली बात सुनकर उसने आंखें तरेरते हुए कहा ''इस मुए का पेट है कि भरसांय। जब देखो कुछ न कुछ खाता रहता है। इसके चलते ही घर में दरिदर का बास हो गया है। भगवान करे इसके पेट में बज्जर पड़े। इसका शरीर गल-गलकर चूए। मुंहझौसे की अरथी उठे।

इतनी लानत-मलामत के बाद भी बाबू साहेब को संतोष नहीं हुआ। सामने पड़ा सोंटा उठाकर वो बुधुआ की तरफ लपके और लगे उसको पीटने। बुधुआ चिल्लाता रहा, गिड़गिड़ाता रहा ''नहीं बाबू साहेब, अब कुच्छो नहीं खाएंगे...।''

धूल में लोटते हुए वो लगातार चिल्लाए जा रहा था नहीं बाबू साहेब! माई किरिया (कसम) बाबू साहेब...अब नहीं खाएंगे...बाप किरिया बाबू साहेब, जब बुलाइएगा तब सुनेंगे, पित्तर किरिया बाबू साहेब, छोड़ दीजिये बाबू साहबे''...चिल्लाने के क्रम में उसके मुंह से गाजनुमा थूक बाहर आने लगा था। सोंटे की मार से बचने के लिए वो कभी लौटते हुए दायीं ओर को मुड़ जाता तो कभी बायीं ओर को।

अंत में जब सोटा टूट गया तो बाबू साहेब हांफते हुए लात-घूसों से उसकी धुनाई करने लगे। लगभग अधमरा करके ही बाबू साहेब ने बुधुआ को छोड़ा फिर बबुआइन से बोले ''स्साला बहुत जब्बर है। इसकी मतारी के000ये नीच लोग साले बहुत चाई होते है।''

इस बात पर बबुआइन बिहंसती हुई बोली ''पता नहीं मरदुए क्या-क्या खाते हैं। गाय-सुअर तक तो छोड़ते ही नहीं।''

इतनी मार पड़ने के बाद बुधुआ का पोर-पोर दुखने लगा था। उसे अब सांस लेने में भी कठिनाई हो रही थी। उसका लगभग प्रत्येक अंग सूज गया था। उसने करवट लेने की कोशिश की, लेकिन एक तीव्र वेदना उसके पूरे वजूद में फैल गई।

जब दिन भर खेत में काम करने के बाद वो घर लौटा, तो खाना खत्म हो चुका था। जाकर बबुआइन से बोला कि 'मालकिन मुझे भूख लगी है। कुछ खाने को है तो दीजिए।''

तब बबुआइन लगभग झल्लाते हुए, बोली थी ''जाओ जाकर पहले

बैलों को सानी-पानी दे दो, तब आकर खाते रहना।'' गोया आदमी के खाने से पहले जानवर का खाना जरूरी हो। जब वो खली-भूसी सानकर नांद के करीब गया, तो उसे बासी रोटी का एक अधजला टुकड़ा नांद के भीतर दिखा, जिसे देखकर पहले उसने चोर-नजरों से चारों तरफ देखा, फिर आहिस्ता से उस रोटी के टुकड़े को उठाकर देखने लगा, मानो कि उसे रोटी का टुकड़ा न मिला हो, कोई कीमती चीज मिल गई हो। नांद में नमी के कारण रोटी गूंधे हुए आटे का शक्ल अख्तियार कर चुकी थी। फिर भी बुधुआ ने उस रोटी के टुकड़े को हसरत भरी नजरों से देखा और कुछ देर तक अपलक देखता रहा। फिर वो उसे खाने लगा था, तभी बाबू साहेब ने उसे हांक लगाई थी।

बुधुआ एक बार फिर दर्द और भूख के दोहरे प्रहार से कसमसाया। उसे लगा जैसे कि उसकी अंतड़ियों को कोई जोर-जोर से उमेठ रहा है। भूख और दर्द की लहरों पर सवार वो लगभग चेतनाशून्य-सा हो चला था। फिर धीरे-धीरे बुधुआ की स्मृतियों के बादलों का झुटपुटा साफ होने लगा था। उन बादलों के बहुत सारे टुकड़ों में बुधुआ भी था और उसके गांव-जवार के उसके संगी-साथी भी। बुधुआ उर्फ बुधन दुसाध वल्द फेंकू दुसाध उस समय मात्र आठ वर्ष का था, जब उसके पिता ने उसे बाबू साहब के यहां बंधक रख दिया था, उसकी बड़ी बहन पशुपतिया के विवाह में दहेज देने के लिए। जिस समय गांव के बालवृन्द खेतों की ऊबड़-खाबड़ पगडंडियों पर छकडे चलाते, गांव के तालाब-नाले में मछलियां पकड़कर आग में भून कर खाते, गर्मियों में आम के बगीचे में आम के मांजरों पर गुलेल से निशाना लगाने का खेल-खेलते थे, उस समय बुधुआ या तो अपने मालिक के खेतों में काम कर रहा होता या फिर ढोर-डंगर चरा रहा होता। उसे बहुत धुंधली-धुंधली सी याद है। जब वो बाबू साहेब की कोठी में आने को हुआ था, तब उसकी महतारी छाती पीट-पीट कर रोने लगी थी।

करीब-करीब चार-पांच साल तो हो ही गए उसे बाबू साहेब की तामीरदारी करते। उसे उस वक्त थोड़ा सा आश्चर्य भी हुआ था, जब उसकी मां विलाप करते हुए बार-बार कए ही बात को दुहरा रही थी ''मत ले जाहो बाबू साहेब हमारा बेटा के। ई चिरागजइसन लईका हम कहां से लाइब...हम जानत हई अब दुबारा इंहा न आई, एक बार बिकाइल चीज कहीं वापस

होएला।'' तब पशुपतिया के बाबू उसकी मां को समझाने लगे थे ''ना रे पशुपतिया के माई, पशुपतिया के बियाह के साल-छव महीनास बाद धीरे-धीरे करके कर्जा उतार दीहल जाई।''

लेकिन जब बाबू साहेब के मुंडेर के नीचे बुधन के पिता पहुंचे, तब बुधन का मन कैसा तो होने लगा था, और उसके बाबूजी तो फफक-फफक कर रो पड़े थे।

बोलने की कोशिश में शब्द उनके गले में अटक-अटक से पड़ते थे। तब बड़ी मुश्किल से वो बोल पाए ''बबुआ...हमरा के मा...'' और वे भरभराकर रो ही तो पड़े थे। फिर उन्होंने उसके आगे अपने दोनों हाथ जोड़ दिए थे। उन छलछलाई-पानीदार आंखों में उसे अपने बाप की बेचारगी साफ झलक रही थी।

वो दिन था और आज का दिन है। फिर खुशी क्या चीज होती है, बुधुआ को आज तक पता नहीं चला। बाबू साहेब के यहां आने के बाद उस पर रोज-रोज नए-नए अत्याचार होने लगे। इन चार-पांच सालों में वो चार-पांच हजार मौतें मरा होगा, लेकिन उसके अन्दर का स्वाभिमान नहीं मरा था। प्रतिरोध के तेवर उसके अन्दर मौजूद थे। फिर उम्र भी उसकी कोई खास नहीं थी। इसलिए ज्यादातर वो नाफरमानी ही करता और इस कारण पिटता भी दमभर के बाबु-बबुआइन से।

एक बार वो कभी रामदेई पासवान का भाषण सुनने गया था। उनके बारे में उसने सुन रखी थी कि वो कोई बुद्धिजीवी-कम्युनिष्ट है। शहर से पढ़कर उन जैसे लोगों की समस्याओं को जानने-समझने के लिए ही वे उसके गांव आए है। क्या-क्या तो बताते रहे थे वां हां, याद आया, वो कोई किरान्ती-ऊरांती की बात कर रहे थे। कहते थे ''अब हम लोगों को डरने की कोई जरूरत नहीं है। अब हम अपने ऊपर कोई अत्याचार बर्दाश्त नहीं करेंगे। बहुत कर चुके हम राजपूत-भूमिहरों की गुलामी, अब हमें जागना होगा। तभी तो ये लोग फिर से हम पर राज करने लगेंगे।'' और...और क्या बता रहे थे। हां...कह रहे थे कि जब तुम्हारे ऊपर अत्याचार बढ़ रहा है, तो तुम लोग नक्सली बन जाओ। तब उन लोगों में से ही किसी ने पूछा था ''ई नक्सली का होता है भईया...?''

तब रामदेई पासवान ने बताना शुरू किया था ''नक्सली माने हक के

लिए लड़ने वाला, अत्याचार को बर्दास्त नहीं करने वाला। सबको एक्के-छिप्पा में बैठाकर खाना-खिलाने की व्यवस्था करने वाला...रणबांकुरों की तरह घांय-घांय गोलियां चलाने वाला...।'' उस दिन वो चौंक-सा पड़ा था। उसे आखिर वाली दो-चार बातें समझ में नहीं आई थी ई कैसे हो सकता है कि राजपूर-दुसाध एक्के-छिप्पा में बैठकर खाना खाएं। जबकि बाबू, साहेब तो उसे अपने घर में घुसने तक नहीं देते। वो पास वाले गोहाल, घर के बगल में बने ओसारे में सोता था। उसकी खाट के आस-पास तो कोई फटकता तक नहीं था और गोली बंदूक...बाप-रे-बाप...। उसे एक बार की घटना याद आयी। जब बभनौटी में किसी बात को लेकर आपस में ही झड़प हो गई थी, तो गोलियों की गरज से पूरी दुसाध टोली थर्रा गई थी। उस रात उसके बाबूजी ने उन लोगों को सख्त हिदायत दी थी कि खबरदार...चाहे जो हो जाए, घर से बाहर कोई नहीं निकलेगा।

फिर बाबू साहेब के यहां आने के चार-पांच महीने बाद *बप्पा* आया था। टसटस पियर धोती और सगुन का मुरैठा बांधे। तब उसे वापस अपने साथ ले जाने के लिए उसने बहुत चिरौरी-मिन्नत की थी बाबू साहेब की। लेकिन बाबू साहेब टस से मस नहीं हुए थे। फिर हाथ जोड़-जोड़कर भकुवा-भकुवा कर रोने लगा था *बप्पा* तक जाकर कहीं बाबू साहेब ने उसके घर के कागज को अपने पास गिरवी रखकर बुधुआ को वापस उसके गांव जाने दिया था।

गांव पहुंचने के बाद उसे अपने पहले का घर पहचान में ही नहीं आ रहा था। घर के पिछवाड़े की दीवार और एक कमरा एक सिरे से गायब थे। वहां अब साव की बछिया बंधी हुई थी और उनके घर का दरवाजा पहले से कुछ ज्यादा ही चौड़ा दिखाई दे रहा था। जिस दिन सगुन हुआ उस दिन माड़ी पर की मेहरारू लोग आपस में बतिया रही थी ''बाप है कि कसाई, बछिया (पशुपतिया) को अपने जैसे उम्र के आदमी से ब्याह रहा है।''

तब सगुनी बुआ ने उन लोगों को समझाते हुए कहा था ''क्या अनाप-शनाप तुम लोग बके जा रही हो। बेचारे की हैसियल होती तो वो किसी अच्छे घर में रिश्ता न करता। खैर, बाबा बलेसरनाथ किसी तरह पार-घाट लगाए, जो होनाथा सो हुआ।''

तब बुधुआ ने भी सोचा था कि भोज-भात और जात-बिरादरी के चक्कर में *बप्पा* बेकार ही पड़ा। नहीं तो उसकी जिंदगी की मिट्टी पलीद काहे को

होती।

बुधुआ ने एक बार फिर करवट लेने की कोशिश की, लेकिन दर्द ने फिर दूने वेग से हमला किया...बहुत दिनों से उसके भीतर कुछ रेंग रहा है... लम्हा-दर-लम्हा...रफ्ता-रफ्ता...हौले-हौले...और आज उसे पकड़ लिया है उसन। उस फर्श पर थूक का एक मोटा चकता थूका, फिर...वो घोड़े पर सवार हो गया है और...और घोड़ा बड़ी तेजी से दौड़ रहा है। वो सामने जंग के मैदान में देखता है कि सामने बाबू साहेब भी खड़े हैं उसी रोबीली मुस्कान के साथ मोटी-मोटी मूंछों को ऐंठते हुए। अरे ये उसके हाथ में फरसा कहां से आया। देखो तो कैसा चमक रहा है। लगता है जैसे अभी-अभी उस पर सान चढ़ाया गया हो। और इसके साथ ही उसने फरसा खींच कर चलाया है। खच्चाक. ..अरे ये क्या हुआ, बाबू साहेब का सिर धड़ से अलग हो गया है। अरे देखो तो कैसे जमीन पर गिरकर छटपटा रहे है बाबू साहेब के सिर और धड़। वाह मजा आ गया...। वो फरसा फेंककर ताली बजाने लगता है। लेकिन जैसे ही वो अपने गांव की ओर जाने वाली पगडंडी की ओर मुड़ता है, बाबू साहेब की खौफनाक हंसी उसके कानों में गूंजती है ‘‘हां-हां-हां...हां-हां-हां।

अरे ये क्या हुआ, बाबू साहेब के एक जैसे दस चेहरे धड़ समेत जंग के मैदान में कैसे दिख रहे हैं तभी विपरीत दिशा से वो रामदेई पासवान को घोड़े पर सवार आते हुए देखता है। वो अब थोड़ा-थोड़ा खुश हो जाता है। लेकिन ये क्या...ये रातो रामदेई पासवान हीं अरे ये तो...ये ...तो... बाबू साहेब लग रहे है।...

नामकरण संस्कार

आज चमरोटी में बड़ी चहल-पहल है। गंगू चमार अपनी पत्नी बुधिया को बरामदे से पुकारते हुए बोले ‘‘अरे ओ दिवाकर की मां ....मैं पंडित जी को बुलाने जा रहा हूं। उनके बैठने के लिये केले का पत्ता पूजा के लिये गोबर, दूध, तुलसी दूब का इंतजाम हुआ है कि नहीं? तुम्हें तो पता है कि पंडित जी कितने गुस्से वाले हैं। जरा सी बात में मीन-मेख निकालने लगते हैं।’’

दिवाकर की मां बुधिया सिर के पल्लू को ठी करते हुए बाहर निकली और अपने पति को आश्वस्त करते हुए बोली ‘‘हां-हां, आप जल्दी जाइये, मैंने सारा इंतजाम कर लिया है और हां, रास्ते में पड़ने वाले रामभरोसे हलवाई को ताकीद करते जाइयेगा कि मिठाई-बुंदियों का इंतजार हुआ है या नहीं।’’

गंगू चमार अपनी झक-झक साफ-सफ्फाक धोती के टोंके को उठाकर ब्राह्मण टोली की ओर कूच कर गये। रास्ते में उन्हें रामखेलावन पासी मिला, उन्हें आमंत्रित करते हुए बोले ‘‘भाई रामखेलावन, आज मेरे पोते का नामकरण संस्कार होने वाला है। आप सभी परिवार आज हमारे यहां आमंत्रित हैं।

इस तरह उन्हें जो भी रास्ते में मिलता, उसे निमंत्रित करते जा रहे थे। जब वे पंडित जी के घर पहुंचने को हुए, तब सूरज भगवान गांव के पश्चिम में बने मंदिर के गुंबदों के बीच से झांकते नजर आए। गंगू ने कलाई पर बंधी

घड़ी की ओर देखा ''बाप रे बाप चार बजने वाले हैं। पंडित जी ने तो मुझे दस बजे ही बुलाया था।'' झिझकते हुए वो किसी तरह पंडित विद्याधर शास्त्री के दालान में प्रविष्ट हुए, उस समय पंडिज जी सुक्खू चौधरी की बेटी के विवाह का साइत विचार रहे थे।

गंगू चमार को देखा तो नाक-भौं सिकोड़ते हुए बोले ''अब आ रहे हो तुम...जब सारा मुहूर्त बीत गया। तुमसे क्या कहा था मैंने कि सुबह दस बजे आना। अभी हम सुक्खू चौधरी की बेटी के लगन का साइत विचार रहे हैं। कल सबेरे चले आना।''

थोड़ी हिम्मत जुटाकर गंगू फिर बोला ''चलिये न महाराज, किसी तरह संस्कार को सम्पन्न करवा दीजिये। सारी तैयारी हो गई है। इसी वजह से इतनी देरी हो गई। टोले-मोहल्ले में सबको न्योता दे आया हूं। छप्पन किस्म के व्यंजन बनवाए हैं। और सबसे बड़ी बात कि ब्राह्मण टोली के ग्यारह पुरोहितों को भी न्योता दिया है। सोचिये, ब्राह्मणों के साथ छल मुझे नरक में भेजेगा कि नहीं।''

छप्पन किस्म के व्यंजनों का नाम सुनकर पंडित जी की आंत थोड़ी ढीली पड़ गयी। वे सुक्खू चौधरी के तरफ देखते हुए बोले ''आज क्षमा कीजियेगा जजमान! इसे भी मैंने कह रखा था, अब देरी हो गयी तो भला इसमें कोई क्या कर सकता है, आप कल आइए। आपकी कन्या के लगन का साइत हम विचारेंगे।'' इतना कहकर वो मसनंद पर से उतर गये और गंगू चमार के साथ निकल पड़े।

अब शाम धीरे-धीरे गहराने लगी थी और ठंड भी बढ़ने लगी थी। पंडित जी चूंकि स्थूलकाय प्राणी थे, इसलिये तेज चलने के बाद भी वे पीछे रह जा रहे थे। आगे-आगे गंगू चमार चल रहा था। कभी-कभी वो खड़ा होकर पंडित जी का इंतजार करने लगता और मन ही मन उकताने लगता कि इनसे जरा तेज चलते भी नहीं बनता। पता नहीं वहां कितनी तैयारी हुई है या हुई भी है अथवा नहीं।

जब पंडित जी समीप आए तो गंगू चमार ने उनसे पूछा ''आपको ज्यादा कष्ट तो नहीं हो रहा है महाराज?''

पंडित जी क्षुब्ध भाव से बोले ''कष्ट तो कोई खास नहीं है गंगू, लेकिन ठंड कुछ ज्यादा ही बढ़ रही है। मैं अपनी चादर साथ में लाना भूल गया।''

इतना सुनते ही गंगू ने झट से अपनी चादर उतारकर उनकी ओर बढ़ाया लेकिन पंडित जी ने लेने से इंकार करते हुए कहा ''अब तो थोड़ी ही दूर है तुम्हारा घर, अब चादर लेकर क्या करूंगा।'' दूर से ही पंडित जी को गंगू चमार का दुमंजिला पक्का, मकान रंग-बिरंगी रोशनियों से जगमगाते हुए दिखाई पड़ा। वे गंगू से बोले ''ई नया वाला मकान कब बनवाए? देखने में तो बड़ा अच्छा लग रहा है। तुम्हारे टोले में तो पहले ऐसा मकान किसी का नहीं था।''

गंगू कृतज्ञ भाव से बोला ''सब आपकी कृपा है महाराज। छोटका लड़का का परसाल (गत वर्ष) आयकर विभाग में हो गया था ना...उसी ने बनवाया है। नहीं तो हमलोग कहां से मकान बनवाने की बात सोच सकते हैं।''

पंडित जी क्षुब्ध भाव से बोले ''हमरो लड़का परसाल आयकर की परीक्षा में बैठा था, लेकिन इनकी बेटी के ...(गाली) कुछ हरामी लोगों ने आरक्षण-ऊरक्षण का झमेला लगा दिया, इसलिये मेरे लड़के का नहीं हो सका।''

पंडित जी के पहुंचते ही सारे घर में भूचाल-सा आ गया। कोई कह रहा है ''अरे भाई दरी कहां है? यहां लाओ। अरे अगरबत्ती यहां से कौन ले गया है? मिल नहीं रहा है। अरे भाई पूजा की थाली कहां है? मिल नहीं रही है। कोई पेट्रोमेक्स जलाकर लाओ।''

जब सब कुछ व्यवस्थित हो गया और नामकरण यज्ञ की शुरूआत हुई, तो ग्यारह पंडितों को खोजा जाने लगा। कोई इधर देख रहा है, कोई उधर देख रहा है। लेकिन कुछ पंडित लोग आए हैं और कुछ नदारद हैं। तुरन्त आदमी दौड़ाये गये आखिरकार सात ब्राह्मणों का जुगाड़ हो पाया। बाकी अन्य लोगों के नाम पर उनकी आटे की प्रतिमा बनाकर उन्हें यज्ञ-स्थल के पास प्रतिस्थापित किया गया।

उधर बरामदे में एक तरफ स्त्रियों को और दूसरी ओर पुरुषों को पंक्तिबद्ध तरीके से खाना खिलाया जा रहा है। बच्चे एक बार खाकर उठते हैं और फिर दुबारा आकर बैठ जाते हैं। एक अजीबोगरीब शोर-शराबा है। किसी को पूड़ी मिल रही है, किसी को जलेबी एक पीस मिल रही है, कोई पानी-पानी चिल्ला रहा हैं एक पांत खाली नहीं होती कि दूसरी जूठे पत्तलों

के आगे बैठ जाती है।

इधर पंडित जी गंगू चमार पर आगबबूला हो गए है "तुमसे मैंने कितनी बार कहा है कि गाय के गोबर के बगैर कोई भी संस्कार हिंदू धर्म में सम्पन्न नहीं हो सकता है। तुरन्त गाय के गोबर का इंतजार करो।"

गंगू चमार ने अपने टोले के एक लड़के बकलोलवा को पुकारा। बकलोलवा गाय का गोबर लेने गोशाला की तरफ दौड़ा लेकिन उसे वहां गाय का गोबर नहीं मिल रहा। हार कर उसने भैंस की ताजी लीद उठाई और उसे गंगू चमार के घर पहुंचा आया, तब पंडित जी ने मंत्र पढ़ना शुरू किया "ऊं नामकरणः यज्ञ...या देवी सर्वभूतेषु...नारायणीं...।

कमरे में धूप की सुगंध फैलने लगी है। सम्पूर्ण मकरा दिव्यमय और अलौकिक जान पड़ता है। फिर शंख की ध्वनि सुनाई पड़ रही है और अंत में पंडित जी ने बालक को उसके नामकरण के लिये पुकारा। सुगिया, बालक की मां बालक को गोद में लेकर आ गई, तब पंडित जी ने बालक के पिता काली चमार से पूछा "बताईये जजमान बालक का क्या नाम रखा जाए?"

बुधिया, सुगिया, काली तथा गंगू चमार में राय मश्विरा जारी हैं अंत में काली चमार ने बहुत सोच-विचार कर कहा "महाराज, बालक का नाम 'मनु' रखा जाए।"

पंडित को अब काटो तो खून नहीं, खिसिया कर वे बोले "चमार का बेटा मनु कैसे हो सकता है। तुमलोग कहां नीच-अछूत जात, जिनका छुआ हम लोग पानी भी नहीं पीते। फिर मनु, तो पुरोहित थे, ज्ञानी थे, तुम लोगों का दिमाग तो खराब नहीं हो गया है। इसका कोई और नाम सोचो। मनु इसका नाम नहीं रखा जाएगा।"

वहीं यज्ञ-स्थल के समीप काली चमार का छोटा भाई दिवाकर बैठा था, जो अब आयकर विभाग में अच्छे ओहदे पर कार्यरत था, बोला "बालक का नाम मनु क्यों नहीं हो सकता है पंडित जी। आप जिस वर्ग से है वो वर्ग यानी तथाकथित पुरोहित वर्ग परजीवी है, जो समाज को चूसता रहता है। आपने भैंस और जोंक वाली कहानी तो सुनी होगी। भैंस की पीठ पर जोंक उसके मांस से चिपका रहता है। उसके रक्त को चूसता रहता है। उसी तरह आपलोग भी सदियों से समाज को चूसते रहे हैं। आपलोग कोई भी श्रम का काम नहीं करते। लेकिन दूसरे के श्रम पर मोटे होते जा रहे हैं। आप लोग

वर्षों से समाज को एक बनी बनाई लीक पर चलने के लिए मजबूर कर रहे हैं। आपकी सोच के कारण ही हमारा समाज आज रूढ़ियों से ग्रस्त है। आपने हमारे समाज में आज भी अस्पृश्यता जैसी सामाजिक विकृति को बनाए रखा है। आपलोग बस चार श्लोकों को रहे हुए हैं, जिसके बलबूते पर लोगों को बेवकूफ बनाते रहते हैं, लोगों को ठगते हैं और खुद को महात्मा पुरोहित कहते हैं। आपलोग पाखंड नहीं तो और क्या करते है। इस देश में जहां एक वर्ग बिना हाथ-पांव हिलाए लाखों करोड़ों कमा रहा है, लेकिन देश की आम मेहनतकश जनता को दो-जून की रोटी भी नसीब नहीं हो रही है। आखिर ऐसा क्यों है? यह प्रश्न आज का नहीं है, बहुत सालों से चलता आ रहा है।"

थोड़ा सुस्ताने के बाद दिवाकर फिर बोला "एक बात और पूछना चाहूंगा पंडित जी, हमलोगों के नाम अक्सर घासी, मंगरू, अधकपारी और पता नहीं दुनिया भर के कितने सारे अनाप-शनाप नाम हो सकते हैं, तो ऐसे नाम आपलोगों के क्यों नहीं हो सकते?" दिवाकर के इतने लम्बे-चौड़े उपदेश को सुनकर पंडित जी सत्र रह गये। उन्होंने याद करते हुए कहा "यह वही देवा है न, जो कभी बिना पैट पहने मैली-सी बुर्शट पहले यहां-वहां घूमता रहता था और जिसकी नाम बहती रहती थी। आज इतना समझदार हो गया है कि मुझे दुनिया जहान की बातें समझाने लगा है। इसे ऋषि मुनियों के सत्य-वचन, मिथक लगने लगे हैं। अब तो परमात्मा ही इस हिंदू धर्म को बचा सकता है या शायद वो भी नहीं। जब धरती पर ऐसे-ऐसे विधर्मी या पाखंडी रहेंगे, जो ईश्वर के समान पुरोहित को अपमानित करेंगे, तब इस संसार का क्या होगा। घोर कलयुग आ गया है...घोर कलयुग। अब धरती से धर्म का नाश होने वाला है। सनातम धर्म खत्म होने वाला है।"

पंडित ने कुछ ठोस निर्णय लेते हुए कहा "चलो विप्रो, जहां पुरोहितों-ज्ञानियों का आदर-सम्मान नहीं, वहां हमें नहीं रहना चाहिए। ईश्वर इनका कल्याण करेंगे। इनके लोग-परलोक का देखेंगे। चलो उठो, अब हमें यहां एक पल भी नहीं रुकना चाहिए।"

स्थिति को बिगड़ते देख दिवाकर के पिता आनन-फानन में बीच में कूद पड़े। वे पंडित जी से क्षमा मांगते हुए बोले "जाने दीजिए पंडित जी, अभी बच्चा है, नादान है। इसे लोग-परलोक की चिंता नहीं तो क्या हुआ, हमें तो

है। आप जो भी उचित समझें बच्चे का नाम रखें।''

लेकिन तब तक दिवाकर भी कहां चुप रहने वाला था, फिर बोल पड़ा ''देखिये पंडित जी, दिखा दी न आपने लोमड़ी वाली आदत। पता नहीं आपको वो कहानी याद है या नहीं, लेकिन मुझे अच्छी तरह याद है, सुनिये ''एक लोमड़ी थी। गर्मी का दिन था। उसे बहुत जोर से प्यास लगी थी। जंगल में थोड़ी दूर चलने के पश्चात् उसे एक कुंआ दिखाई पड़ा। उसने कुंए के जगत पर चढ़कर देखा। उसे कुएं के अंदर का पानी साफ-सुथरा और ठंडा जान पड़ा। उसने आव देखा न ताव झट से कुएं में कूद गई। जब वो ठंडा जल पीकर तृप्त हो गई, तो उसे अपनी जानवरों वाली हरकत याद आई। अब समस्या भी कि बाहर कैसे निकला जाए। बहुत देर तक छटपटाती रही, लेकिन उसे कोई उपाय न सूझा, संयोगवश थोड़ी देर बाद उसने कुएं की जगत पर एक हिरण को देखा। उसने हिरण का आमत्रित करते हुए कहा ''क्या तुम भी इस मीठे ठंडे सोते का जल पीने चले आए? आओ, अन्दर आओ। इस सोते का जब बहुत मीठा है, आकर पीकर देख लो।'' हिरण को भी जोरों की प्यास लगी थी। उसने सोचा शायद लोमड़ी ठीक कर रही है, और जानवर की जात उसने आव देखा न ताव झट से कुएं में झलांग लगा दी। लोमड़ी इसी मौके की तलाश में थी। उसने तुरन्त हिरण के पीठ पर पैर रखा और एक छलांग में वो कुएं के बाहर थी।''

दिवाकर कुछ देर के लिए रूका, फिर बोला ''अब आप बताइए पंडित जी, क्या समझे आप इस कहानी से? इस कहानी में लोमड़ी कौन है और हिरण कौन? आपने अभी थोड़ी देर पहले कहा था कि तुमलोग कहां नीच-अछूत जात, जिसका छुआ हमलोग पानी भी नहीं पीते, लेकिन संस्कार सम्पन्न करवाने के बाद नकद इक्यावन या एक सौ एक रुपये लेने से भी नहीं चूकते हैं। साथ में चादर-धोती-कंबल भी आपको चाहिए। हमारे हाथ का पानी आप नहीं पी सकते, लेकिन स्वादिष्ट व्यंजनों को खूब छककर खा सकते हैं। आपलोग परलोक की बात करते है, आपको क्या मालूम है कि पिछले जन्म में आप क्या थे या अगले जन्म में आप क्या होंगे। इंसान को उसके कर्म महान बनाते है, जाति धर्म नहीं। आप सीधे सादे लोगों को उसी धूर्त लोमड़ी की तरह अपने लोक-परलोक के जाल में फंसाते हैं जैसे उस लोमड़ी ने हिरण को फंसाया था। तो याद रखिये अब आपका यह धंधा बहुत

दिनों तक चलने वाला नहीं है। अब हम नीच-अछूत लोग शिक्षित हो रहे है, आपलोगों की धूर्तताओं को समझने लगे हैं। अब हमें आपलोगों की कोई जरूरत नहीं है। ज्यादा अच्छा है कि आप यहां से तशरीफ ले जाइए। और हां, आइंदा किसी चमार के बच्चे का नामकरण करने से पहले अच्छी तरह सोच लीजियेगा कि उसका नाम कुछ भी हो सकता है राम...कृष्ण...मनु..।

'समाप्त'